upon the imagination of the heart. He is able to spread the magic of his mind over the very face of nature and to give to things and places a charm not their own, and to turn this working day-world into a perfect fairyland.' 'The protagonist on the great arena of modern poetry' 'the glory of human intellect' extended Empire of Art over limits not yet recognised and invested it with a splendour which the world had never seen before. There never was an author whose works have been so carefully analysed and illustrated, so eloquently expounded or so universally admired.

Could therefore a better work be pointed out, a vernacular rendering of which would supply a want seriously felt in Hindi? Can re be any concealment of the fact that the vernacular romances have a most demoralising effect upon the minds of readers ? If therefore it is necessary that the enjoyments e mind may be of such a nature as to become a s to our activity and efficiency of action, they must be a nature to keep our ideas healthy and not to over-refine the feelings, to engage the heart and the imagination as well as the practical understanding and to strengthen the will in its resolves; and can it be denied that the plays of Shakespeare possess this property in the highest degree?

I therefore propose to publish Hindi versions of all the thirty-seven plays of Shakespeare. As these Translations are not written with a view to serve as helps to students, those who will seek for close and faithful renderings of individual passages will be sorely disappointed. I shall follow the same principle which has been my guide in my Hindi translations of Sanskrit books—keeping in view the sense of the author, expressing it in the simplest language and avoiding the repulsive character of a paraphrase.

ALLAHABAD :
15th February, 1915. } SITARAM.

EXTRACT FROM PREFACE OF THE SAME TRANSLATOR'S URDU KING LEAR.

The productions of a mind, "the most creative that ever engaged in the exact copy of the details of actual existence", however disfigured in the garb of a vernacular, whose flippancy can be but a mean vehicle for his divine transports and superhuman passions, have still about them a beauty, which the imperfections of a translation cannot mar and a glory which the haze of a foreign language can but slightly diminish. In whatever shape these works be accessible, my young countrymen should study this masterly delineator of the living world. They may thus heighten their sense of moral and intellectual beauty, teach themselves to reflect upon their own nature and anticipate the experience of years.

कहानी का संक्षेप।

एक व्यापारी के दो बेटे थे; दोनों एक नाम और एक रूप के थे। इन दोनों के साथ दो दास थे। वह भी अपने मालिकों की भाँति एक नाम और एक रूप के थे। संजोग बस दोनों भाई एक एक दास के साथ समुद्रयात्रा में जहाज़ डूब जाने से अलग अलग हो गये। एक इफ्सिसनगर में जाकर बचपन से पला और बड़ी पदवी पर पहुँचा। दूसरा अपने बाप के साथ रहा। जब वह बड़ा हुआ तो अपने भाई की खोज में निकला। जब तीन चार वर्ष तक न आया तो उसका बाप भी मामता से उसकी खोज करने लगा। संजोगबस दोनों एक ही दिन उसी नगर में पहुँचे जहाँ पहिला लड़का बरसों से रहता था। जिस देश के यह लोग रहने वाले थे उसमें और इफ्सिसनगर में बहुत दिन से शत्रुता थी, यहाँ तक कि जो कोई मनुष्य उनके देश का इस नगर में पकड़ा जाता तो तुरन्त मार डाला जाता। बूढ़े मनुष्य ने सच सच कह दिया कि मैं अमुक स्थान में रहता हूँ और वह पकड़ लिया गया पर उसके लड़के की एक मित्र ने बचा दिया। वह दिन भर नगर में घूमा जहाँ उसका भाई रहता था। वह दोनों एक ही रूप के थे; इससे कभी छोटे को लोगों ने बड़ा समझ लिया और कभी बड़े को छोटा समझा, यहाँ तक कि स्त्री भी न पहिचान सकी और इन्हीं बार बार धोखों का हाल इस कहानी में है।

THE COMEDY OF ERRORS.

Dramatis Personae.	नाटक के पात्र
Solinus, Duke of Ephesus.	शीलनिधि—इप्सितनगर का राजा।
Ægeon, a Merchant of Syracuse.	अजिन—शिरीशनगर का एक व्यापारी।
Antipholus of Ephesus, Antipholus of Syracuse, Twin Brothers, sons to Ægeon and Æmilia.	इप्सितनगर का अन्तपाल, शिरीशनगर का अन्तपाल—अजिन के जोड़िया लड़के।
Dromio of Ephesus, Dromio of Syracuse, Twin Brothers, attendants on the two Antipholuses.	इप्सितनगर का डमरू, शिरीशनगर का डमरू—दोनों अन्तपाल के दास।
Balthazar, a Merchant.	वलेशर—एक व्यापारी।
Angelo, a Goldsmith.	अनर्गल—एक सुनार।
A Merchant, Friend to Antipholus of Syracuse.	एक व्यापारी—शिरीशनगर के अन्तपाल का मित्र।

A Merchant trading with Angelo.	एक व्यापारी—अनर्गल का व्यवहारी।
Pinch, a Schoolmaster.	एक ओझा।
Æmilia, Wife of Ægeon.	अमलिका—अजिन की स्त्री, पीछे मठ की जोगिन।
Adriana, Wife of Antipholus of Ephesus.	आद्रा—इप्सितनगर के अन्तपाल की स्त्री।
Luciana, her Sister.	ललना—आद्रा की बहिन।
Luce, Servant to Adriana.	चमेली—आद्रा की लौंडी।
A Courtesan.	एक रण्डी।
Gaoler, Officers, and other Attendants.	कारागार के राजपुरुष और राजसेवक।

स्थान—इप्सितनगर।

श्रीसीतारामाभ्यान्नमः।

भूलभुलैया।

पहिला अंक।

[पहिला स्थान—इप्सितनगर राजसभा।]

(राजा शीलनिधि, अजिन और कारागार के राजपुरुष आते हैं।)

अजिन—अब आप सोच विचार न करें; मेरे वध की आज्ञा देकर मेरे इस दुःख के जीवन का अन्त करदें।

राजा—व्यापारी, तुझे अपने वचने के लिये अब कहना व्यर्थ है। हम अपने नियमों को तोड़ नहीं सकते। तुम्हारे नगर के अगले राजाओं की निठुराई ने यह सब काँटे बोए हैं। हमारे नगरके व्यापारी सच्चाई से व्यापार करते थे, परन्तु उनको भी उन्होंने सताया और कड़ा दण्ड दिया। जो जुर्माना न दे सके तो उनको मरवा डाला। इस चाल से उन्होंने अपने कड़े क़ानून पर उनके रक्त की मुहर लगाई तो हम कैसे दया कर सकते हैं। उस दिन से जबकि हमारे और शिरीशनगर के देश में झगड़ा होने लगा, दोनों देशों में निश्चय होगया है कि आपस में व्यापार बन्द हो। जो कोई इप्सित नगर का रहने वाला शिरीशनगर के बाज़ार या गली में दिखाई देगा या कोई शिरीशनगर का रहनेवाला इप्सितनगर के बन्दर में मिलेगा तो

उसका सब धन छिन जायगा और जो एक हज़ार रुपया जुर्माना न दे सकेगा तो मारा जायगा। तेरी जायदाद सौ रुपये से अधिक की नहीं हो सकती, इस कारण अदालत तुझे मारने के योग्य समझती है।

अजिन—इसमें मुझको ढाढ़स है, जिस समय आपकी आज्ञा पूरी होगी मेरे दुःखों का भी अन्त हो जायगा।

राजा—क्यों व्यापारी क्या कारण है कि तूने अपना देश छोड़ा और इप्सितनगर में आकर मौत के मुख में पड़ा और यह तेरे दुःख क्या हैं, जिनकी तू बार बार चर्चा करता है।

अजिन—इससे अधिक कठोर काम मेरे किये नहीं हो सकता, क्योंकि मेरे दुःख ऐसे हैं कि उनका कहना मेरे क्लेश का कारण होगा। पर लोग ऐसा न समझें कि किसी बड़े पाप के कारण मुझको दण्ड मिला, इस विचार से अपने बचाने के लिये अपने अभागे जीवन का ब्यौरा कहता हूँ। मेरा जन्म शिरीशनगर में हुआ था और मेरा ब्याह एक स्त्री के साथ हुआ जिसका जीवनसुख नष्ट करने वाला मैं ही हूँ क्योंकि मेरे भाग्य फूटे न होते तो सब भाँति के सुख की सामग्री उपस्थित थी। बग़-दाद में बार बार यात्रा करने से मुझको बहुत धन मिला था। यही हाल मेरे कारिन्दे के जीवन भर रहा। उसके मरने के पीछे मेरा धनमाल उसी नगर में पड़ा रहा और मुझको बेबस होकर अपनी स्त्री से अलग होकर नगर में आना पड़ा। मैं उससे छः महीने भी अलग नहीं रहा था कि उसने मेरे पास आने का प्रबन्ध किय

वह आप ही उस दुःख से जो स्त्रियाँ आप से आप सहती हैं दुखी थी और थोड़े ही दिन में जहाँ मैं था वहाँ पहुँची। यहाँ वह बहुत दिन तक नहीं रही थी कि दो सुन्दर बच्चे पैदा हुये और उनमें अद्भुत बात यह थी कि दोनों ऐसे एक रूप के थे कि उनमें नाम ही से भेद होता था,

तिन महँ रह्यो भेद कछु नाहीं।
मानहु दर्पण की परछाहीं॥

उसी दिन और उसी सराय में एक नीच स्त्री के दो लड़के पैदा हुये। वह भी एक ही रूप के थे। इन दोनों बच्चों के माँ बाप से जो बहुत ही निर्धन् थे मैंने मोल ले लिया और अपने लड़कों की सेवकाई के लिये पाला। मेरी स्त्री को अपने बच्चों का बड़ा घमण्ड था। उसने मुझे अपने घर चलने को बार बार कहा। मैंने मान लिया पर मेरा मन खटकता था (साँस लेकर) हाय मैंने बड़ी भूल की—हम लोग जहाज़ पर चढ़े। एक कोस तक कुशल रही पर उसके पीछे समुद्र ने जो हर घड़ी हवा का आज्ञाकारी है हमको मृत्यु का सन्देसा दिया। आगे बढ़ कर जीने की आशा जाती रही क्योंकि जिस आपत्ति ने सूर्य को छिपा लिया उसीने हमारे डर से काँपते मन को मृत्यु का सन्देसा सुनाया। मुझको दुःख न होता और मैं प्रसन्नता से मरने को तैयार था पर स्त्री का रोना और बच्चों का चिल्लाना जो बिना कारण अपनी माँ को देख कर चिल्ला रहे थे मेरी छाती फटी जाती थी। अन्त में मैं बेबस होकर उनके और अपने बचाने का उपाय सोचने लगा। मल्लाहों ने जहाज़ को

छोड़ दिया और मेरी नाव पर आ रहे, क्योंकि जहाज़ डूब रहा था। मेरी स्त्री ने जिसको छोटे लड़के की चाह अधिक थी एक ऐसे मस्तूल में जिसको जहाज़ी तूफान से बचने के लिये पहिले ही से रख लेते हैं, बाँध दिया और उसके साथ एक दास को भी बाँध दिया। मैं दोनों की रखवाली में रहा। जब लड़के बँध गये तो मैं और मेरी स्त्री ने अपने बच्चों की ओर दृष्टि करके मस्तूल के दोनों किनारों पर अपने को बाँधा और सब धार में सीधे बहते चले गये। मेरी समझ में कदाचित् कराँची की ओर हम लोग निकल गये होंगे। अन्त में सूर्य की किरनों ने बादल को जो हमारी विपत्ति का कारण था तितर बितर कर दिया और उसीके कारण समुद्र भी ठहर गया। हम लोगों ने देखा कि दो जहाज़ हमारी ओर आ रहे हैं। एक कराँची का था दूसरा इप्सितनगर का, पर उनका आना था कि (ऊँची साँस ले कर) अब मुझको क्षमा कीजिये और जो कुछ मैंने पहिले विनती की है उससे परिणाम समझ लीजिये।

राजा—नहीं, नहीं, कहे जा और इस तरह न छोड़ दे, क्योंकि जो हम तुझको क्षमा नहीं कर सकते तो तेरे ऊपर दया कर सकते हैं।

अजिन—हाय जब जहाज़ दस कोस की दूरी पर रह गये हमारी नाव एक पहाड़ से टकराई। यह बड़े ज़ोर से आ रही थी इसके तुरन्त ही दो टुकड़े हो गये इस वियोग में भाग्य ने हम दोनों के हिस्से में एक एक लड़का छोड़ा। बेचारी स्त्री धार में रुक न सकी और

हवा के वेग में वहुत तेज बह गयी। मैं इतना ही देख पाया कि उसे धीवरों ने पानी से निकाला। अन्त में एक जहाज़ मेरे समीप आ गया। मालिक मुझको पहिचान कर मेरा सन्मान करने लगा। यह लोग कराँचीवालों से मेरी स्त्री को भी छुड़ा लेते पर उनके पास पालें थोड़ी थीं। इस कारण वह अपने घरही को लौट आये। अब महाराज ने मेरे दुःखों का व्यौरा सुन लिया मेरे इस बड़े जीवन में आपत्ति ही आपत्ति हैं और अब यह दशा हुइ कि आपसे अपने अभागे जीवन का हाल कहने को जीता हूँ।

राजा —जान पड़ा कि तू उन्हीं के लिये दुःख कर रहा है। अब हम को वतला कि उन लड़कों का क्या हुआ और तेरा अब तक क्या हाल रहा।

अजिन—मेरा छोटा लड़का जो मेरी चिंता का आधार और जीने का सहारा था अठारह वर्ष का होकर अपने भाई की खोज करने लगा और मुझसे वार वार यह कहता था कि मेरा दास भी (जो उसी भाँति अपने भाई से अलग था, पर रूप और नाम दोनों के एक थे) साथ चलें। मुझ को अपने बड़े लड़के के देखने की बड़ी इच्छा तो थी ही पर हाय जो मेरे साथ था उसको भी जाने दिया। पाँच वरस से मैं ईरान की हर गली और एशिया के हर देश सब नगर जहाँ मनुष्य जा सकता है भटकता रहा और अब घर की ओर जाते हुये यहाँ आया हूँ। मुझे उनके मिलने की कोई आशा नहीं है पर चुप बैठ रहने को भी जी नहीं चाहता। अंब मैं अपने जीवन का व्यौरा समाप्त करता हूँ और जो

कोई यही कह कर मेरी ढाढ़स कर दे कि वह जीते हैं तो मैं आनन्द से मरना चाहता हूँ ।

राजा—हे अभागे मनुष्य जान पड़ता है कि ईश्वर ने तुझ को दुर्भाग्य का आदर्श वनाया है । जो यह वात हमारे क़ानून और हमारे राज्य और हमारे नियम और हमारे शपथ के विरुद्ध न होती तो हम तुझ को छोड़ देते । इसमें सन्देह नहीं कि राजा लोग चाहैं तो उन्हें कोई रोक नहीं सकता, हमारा मन तुझ को छोड़ देने को चाहता है और तुझ को वध का दंड दिया गया है; पर विना इसके कि हम अपने न्याय में वट्टा लगावें और किसी भाँति हम अपनी आज्ञा वदल नहीं सकते । तिस पर भी जो कुछ दया हम कर सकते हैं वह तेरे साथ करैंगे । हम यह दिन तेरे लिये छमा करैंगे । तू किसी उपाय से नगरवालों से सहायता माँग, और जितने तेरे मित्र इप्सितनगर में हैं सब से कह, भीख माँग, उधार ले जिससे दंड का रुपया पूरा हो जाय नहीं तो तुझ को फाँसी दी जायगी । राजपुरुष कारागार में रक्खो ।

राज पुरष—जो आज्ञा ।

अजिन—मैं तो निराश मारा जाता हूँ और इस वेरी से मेरे दुःखों के अन्त का समय टलता है ।

[दूसरा स्थान - चौक ।]

(शिरीशनगर का अन्तपाल और शिरीशनगर का डमरू और एक व्यापारी आते हैं) ।

व्यापारी—तो आप कह दीजिये कि हम करांची से आते हैं, नहीं तो आप का सब धन तुरन्त छिन जायगा। आज ही एक शिरीशनगर का व्यापारी यहाँ आने के लिये पकड़ा गया है और उसके पास दण्ड देने को पूरा धन नहीं है इससे वह सूरज डूबने से पहिले मारा जायगा। यह लीजिए वह रुपया जो आप ने मुझे रखने को दिया था।

शि० अंत०—डमरू ले और जहाँ हम लोग ठहरे हैं ले जा। वहाँ हम भी आवेंगे। एक घंटे के पीछे खाना खाने का समय होगा तब तक इस नगर को देखेंगे, व्यापारियों का हाल पूछेंगे और बड़े बड़े मन्दिरों को देखेंगे और तब आके सराय में सोवेंगे क्योंकि हम यात्रा करते करते थक गये हैं।

शि० ड०—बहुत लोग आप की बात मान लेंगे और क्यों न मानेंगे रुपया तो पहिले इतना हाथ आगया (बाहर जाता है)।

शि० अंत०—एक विश्वासी सेवक है जब मैं सोच में रहता और दुःखी होता हूँ तो अपनी हँसी से जी प्रसन्न किया करता है। आप मेरे साथ नगर देखने चलें और जहाँ मैं ठहरा हूँ वहाँ चलकर मेरे साथ खाना खायँ।

व्यापारी—जी नहीं, मुझ को क्षमा कीजिए। मुझे कुछ व्यापारियों ने बुलाया है जिनका मैं बहुत कुछ लाभ कर सकता हूँ। पाँच बजे ठीक मैं आप से मिलूँगा और तब से सोते के समय तक आप के साथ रहूँगा परन्तु इस समय जाने दीजिये।

शि० अन्त०—बहुत अच्छा प्रणाम मैं भी इधर उधर टहलूँगा और नगर देखूँगा।

व्यापारी—आप प्रसन्नता से जो जी में आवे कीजिये।

(बाहर जाता है)।

शि० अन्त०—जो मनुष्य मुझ से यह कहता है कि जो जीमें आवै सो कीजिये वह मुझ को ऐसा काम करने को कहता है जो मेरे किये नहीं हो सकता। मैं इस संसार में उस पानी के बूँद की भाँति हूँ जो समुद्र में दूसरे बूँद की खोज में मारा मारा फिरता है और अन्त को हिराय जाता है वैसा ही मैं अपनी माँ और भाई की खोज में हैरान होकर मिटा जारहा हूँ।

(इप्सितनगर का डमरू आता है)

यह देखिये मेरा कामकाजी सेवक आया। क्या है, तुम इतनी जल्दी क्यों लौट आए।

इ० ड०—इतनी जल्दी आया, मुझ को तो बड़ी बेर हो गई मुर्ग़ जला जाता है माँस सींक से आग में गिर रहा है और जब घंटे में बारह बजा तो बहूजी ने मेरे सिर पर एक बजाया। खाना ठढा हो रहा है इससे वह बहुत गरम हो रही हैं और कहती हैं कि खाना ठंढा होता है और आप घर पर नहीं आते और आप के घर पर न आने का कारन यही है कि आप को भूँख नहीं है क्योंकि आप कहीं और भोजन कर चुके हैं। परन्तु हम लोग जानते हैं कि उपास करना और देवता मनाना क्या है। आश्चर्य यह है कि आप अपराध करें और हम व्रत रहें।

शि० अन्त०—ले बस हो गया, अब चुप रह और यह बता कि जो रुपया मैंने तुझ को दिया था वह तूने क्या किया और कहाँ छोड़ा।

इ० डम०—आप ने मुझ को बुध के दिन चार आने दिये थे। वह मैंने आप की आज्ञा से बहूजी के मोजे बनाने के निमित्त मोची को दे दिये अब उसी के पास हैं मैं ने अपने पास एक पल भी नहीं रक्खा।

शि० अन्त०—इस समय हँसी का समय नहीं है। ठीक ठीक बता कि रुपया कहाँ है। तू यह जानता है कि हम लोग परदेसी हैं और फिर इतना रुपया तू और के भरोसे छोड़ आया।

इ० डम—जी सुनिये जब आप भोजन करने बैठें उस समय आप हँसी कीजिये। बहूजी के पास से दौड़ता हुआ आया हूँ और जो मैं लौट जाऊँगा ता वह आप का अपराध मेरे सिर पर उतारेंगी। मेरी समझ में ता आपका पेट मेरे पेट की नाईं आपका घंटा होना चाहिये जो कि समय पर घर चलने को कह दे जिससे कि किसी के भेजने की आवश्यकता न रहे।

शि० अन्त०—अच्छा बस इस समय हँसी ठीक नहीं है और अब किसी उचित समय के लिये इसे रख छोड़। वह रुपया क्या हुआ जो मैंने तुझे दिया था?

इ० डम०—मुझ को आपने कब रुपया दिया था।

शि० अन्त०—चुप दुष्ट अपने खोटेपन की बातें छोड़ और बताकि तूने अपना काम किया?

इ० डम०—जी मेरा तो इतना ही काम था कि आपको बाज़ार से बुला लाऊँ। बहूजी और उनकी बहिन आप की राह देख रहीं हैं।

शि० अन्त०—ईश्वर की सौगन्ध बचा ठीक ठीक उत्तर दो। तुमने वह रुपया क्या किया और कहाँ रक्खा? नहीं तो हम तुम्हारी इस हँसी से भरी हुई खोपड़ी को तोड़ डालेंगे। अब इस समय हमारा चित ठिकाने नहीं है और तू हम से चाल की बातें कर रहा है। जो हमने तुझ को हज़ार निसान *दिये थे वह तूने का किये।

इ० डम०—मेरे सिर पर कुछ आपके दिये हुये निसान हैं और कुछ कन्धों पर बहू जी के निसान है परन्तु सब मिल कर हज़ार न होंगे और जो मैं आप को सब फेर दूँ तो आप धीरज के साथ न ले सकेंगे।

शि० अन्त०—कैसी बहू जी और किस के निसान।

इ० डम०—आप की बहू जी जो इप्सित नगर में रहती हैं और जब तक आप घर नहीं आते भूँखी रहती हैं और मनाती हैं कि आप घर लौट आवैं।

शि० अन्त०—क्यों रे हम तुझ को बेर बेर रोकते जाते हैं और तू नहीं मानता और हमारे मुँह पर हम को मूर्ख बनाता है तुम बचा जिसके गाहक हो बिना पाए न मानो गे लो बचा (उसे मारता है)।

इ० डम०—जी आपका क्या विचार है? ईश्वर के लिये हाथ रोकिये जो आप हाथ न रोकेंगे तो मैं भाग जाऊँगा (बाहर जाता है)।

---

* उस देश में सिक्के को निसान कहते थे।

शि० अन्त०—ईश्वर की सौगन्ध किसी उपाय से भुलावा दे कर इस पाजी से लोगों ने रुपया ले लिया है। मैंने सुना है कि यह नगर धोखा और चालाकी से भरा हुआ है और ऐसे चालाक भरे हैं जो दिठवन्दी कर देते हैं और जादूगर मनुष्यों को बदला देते हैं। ऐसी डाइनें हैं जो मनुष्यों का रूप बदल देती हैं छिपे हुए चोर धोखा देने वाले और इसी भाँति के लोग बहुत हैं। जो ऐसा ही है तो मैं जल्दी भागूँगा और सराय में जाकर उसको ढूढूँगा। मुझे डर लगता है कि कहीं मेरा रुपया तो नहीं खो गया (बाहर जाता है)।

दूसरा अंक।

[पहिला स्थान-इ० अन्तपाल का घर]

(आद्रा और ललना आती हैं)।

आद्रा—न वह आए और न नौकर लौटा मैंने उनकी खोज में उसे ऐसी जल्दी भेजा था। अब तो दो बज गये होंगे, क्यों ललना बहिन।

ललना—हो सकता है कि किसी व्यापारी ने उनको बुलाया हो और आज उनको भोजन कराया हो या वह आज बाज़ार से कहीं खाना खाने चले गये हों? बहिन आओ खाना खाँय और क्रोध न करो। पुरुष स्वाधीन होतेहैं वह समय और अवसर के आधीन हैं। ऐसा

समझ कर वहिन तुम को धीरज धरना और चुप रहना चाहिये।

आद्रा—पुरुषों की हम लोगों से अधिक स्वतंत्रता और उनका अधिक अधिकार क्यों होना चाहिये।

ललना—क्यों कि घर के वाहर उनका काम अधिक रहता है।

आद्रा—देखो जब मैं कुछ कहती हूँ तो वह बुरा मानते हैं।

ललना—तुमको जानना चाहिये कि तुम्हारी मर्ज़ी की लगाम उनके हाथ में है।

आद्रा—ऐसी लगाम तो कदाचित गदहों ही को अच्छी लगे।

ललना--जी जब स्वाधीनता अधिक हो जाती है तो उसको दुख का कोड़ा लगता है। संसार में जितनी वस्तु हैं चाहे, धरती पर हों या समुद्र में या हवा में सब की मर्यादा है। चौपाये, मछली, पक्षी और भाँति भाँति के जीवों में से स्त्री सदा पुरुष के आधीन हैं। पुरुषों में ईश्वर का अधिकार अधिक है। वह इन सब का स्वामी है सारे संसार का हाकिम है और समुद्र पर भी उसका अधिकार है। उसमें मछली और पक्षियों से अधिक बुद्धि और पवित्र आत्मा है वह अपनी स्त्री का स्वामी नहीं वरन ईश्वर है। इसीलिये तुम को भी चाहिये कि जो उनकी मरज़ी हो उसको तुरन्त स्वीकार करो।

आद्रा—इसी दासीपने के डर से तुमने अपना व्याह नहीं किया।

ललना—यही नहीं व्याह में और बखेड़े हैं।

आद्रा—पर जब तुम्हारा व्याह हो जाय तो तुम दासीपन करोगी।

ललना—मैं प्रेम करने और व्याह की चिन्ता मन में लाने से पहले सेवकाई सीखूँगी और उनकी बान डालूँगी।

आद्रा—जो तुम्हारा पति कहीं और चला जाय तो।

ललना—जब तक लौट न आवैगा मैं धीरज धरे बैठी रहूँगी।

आद्रा—जो धीरज को न छोड़े तो धीरज रह भी सकता है। वह लोग धीरे धीरे दब्बू हो सकते हैं जिन्हें और कोई काम न हो। अभागी लोगों को जिन पर जनम भर आपदा पड़ी है हम धीरज धरना सिखाते हैं। पर जब हमारे ऊपर भी उतनी ही या उससे अधिक आपदा पड़ती है तो हम आप हाय हाय करते हैं कहावत है कि 'जिसके पाँव न फटी बेवाई, सो क्या जाने पीर पराई' उसी भाँति तुम हो मेरी नाईं तुम्हारे कोई बेपीर स्वामी नहीं है। इसी कारन तुम मुझको सिखाती हो और धीरज की राह दिखाती हो। जो तुम भी व्याह करो और इसी भाँति दुख सहो तो यह धीरज तुम्हारे मन से निकल जाय।

ललना—अच्छा मैं भी देखने के लिये एक दिन व्याह करूँगी। देखो, तुम्हारा नौकर यह आया अब तुम्हारे स्वामी भी पास ही होंगे।

(इप्सितनगर का डमरू आता है)

आद्रा—क्यों तुम्हारे सुस्त मालिक हाथ आये?

इ० डम०—नहीं वह तो मुझसे हाथा पाई पर हैं और मेरे दोनों कान इस बात के गवाह हैं।

आद्रा—ठीक कह तुझको मिले और तूने उनसे कहा और उनके जी का हाल जाना।

इ० डम०—जी हाँ उन्होंने अपने मन का हाल मेरे कान से कह दिया उनके हाथ से पूँछियेगा। मेरी समझ में तो नहीं आया।

ललना—क्या उन्होंने ऐसा गूढ़ कहा कि तेरी समझ में नहीं आया।

इ० डम०—जी नहीं उन्होंने ऐसा साफ़ हाथ दिया कि मैंने अपने कानों पर उसका धमाका भली भाँति जाना। साथ ही ऐसा सन्देह भी हुआ कि मेरी समझ में उसका अर्थ कुछ भी न आया।

आद्रा—ठीक वता घर आते हैं कि नहीं जान पड़ता है कि वह अपनी स्त्री को प्रसन्न करने की चिन्ता में डूबे रहते हैं।

इ० डम०—नहीं बहूजी मुझे तो जान पड़ता है कि सरकार सिड़ी हो गये हैं।

आद्रा—अबे सिड़ी क्या ?

इ० डम०—जी सिड़ी नहीं पागल। जब मैंने उनसे कहा कि भोजन करने घर पर चलिये तो वह मुझसे हज़ार निसान माँगने लगे। मैंने कहा सरकार भोजन करने का समय हो गया; वह बोले 'मेरे निसान' मैंने कहा आप घर पर चलेंगे- कहा 'मेरे निसान' अबे तूने हज़ार निसान क्या किये जो मैंने तुझे दिये थे। मैंने कहा सरकार

साँस जल गया उत्तर दिया मेरे निसान। मैंने कहा बाई जी में क्या जानूँ बाई कौन हैं।

ललना—यह किसने कहा ?

इ० डम०—सरकार ने कहा और किसने कहा और यह कहा कि मैं बाई और घर कुछ नहीं जानता। मेरा सन्देसा तो मुँह ही से कहने का था पर मैं अपने सिर और कन्धों पर भर लेता आया क्योंकि अन्त को उन्होंने मुझे मारा।

आद्रा—जा फिर लौट जा और सरकार को घर ले आ।

इ० डम०—फिर जाऊँ और फिर वह मुझको मार पीट कर घर भेज दें ईश्वर के लिये किसी और को भेजिये।

आद्रा—दूर हो जा नहीं मैं तेरा सिर तोड़ डालूँगी।

इ० डम०—और वह उसके ऊपर पीटेंगे तो आप दोनों के बीच में मेरे माथे जायगी, मरे तो हम।

आद्रा—जाता नहीं, बक बक लगाये है।

इ० डम०—मैं तो कुछ कहता नहीं आप मुझ पर बिना कारण बिगड़ रही हैं और मुझको आप गेंद की भाँति इधर उधर ठोकर देकर दौड़ा रही हैं। आप इधर ठोकर देकर उनके पास भेजती हैं और वह ठोकर देकर आपके पास भेजते हैं।

(बाहर जाता है)

ललना—तुम्हारे चेहरे से कितनी अधीरता प्रकट होती है।

आद्रा—अब वह रण्डियों के साथ रहने लगे और मैं घर में मुँह देखने के लिये तरस रही हूँ। क्या घर में रहने और इतनी आयु अधिक होने से मेरा रूप बिलकुल बदल

गया ? क्या मेरी बात बुरी लगती है ? क्या मेरे हँसने बोलने में कुछ भी रस नहीं है ? जो मधुर-भाषण और हँसी ठट्ठा को नाश करने वाला कोई है तो निठुराई है जिसका प्रभाव पत्थर से अधिक दिल तोड़ने में होता है। क्या इन रण्डियों के अच्छे अच्छे कपड़े इन्हें बहुत अच्छे लगते हैं ? इसमें मेरा दोष नहीं है मेरी सम्पत्ति के स्वामी वही हैं जो मुझमें कोई दोष आये हों तो वह उन्हीं के लाये हैं और मेरी कुरूपता के वही कारण हैं। जो वह कृपा करके मेरी ओर देखेंगे तो मेरा चेहरा फिर वैसा ही हो जायगा। परन्तु वह तो जङ्गली पशुओं की भाँति रस्सी तोड़ा कर भागते हैं और बाहर जाकर चैन उड़ाते हैं और मैं तो घर की मुर्ग़ी हूँ।

ललना—देखो बहिन यह डाह तुम्हीं को कष्ट दे रहा है। अपने मन को इससे साफ़ करो।

आद्रा—जिन मूर्खों के चित्त पर कुछ असर नहीं होता वह ऐसे ऐसे क्लेशों को तुच्छ समझती हैं। मैं भली भाँति जानती हूँ कि उनकी आँखें किसी और से उलझी हैं नहीं तो क्या कारण है कि वह हमारे पास न आते। नहीं बहिन, तुम जानती हो कि उन्होंने मुझे एक ज़ञ्जीर देने को कहा था ईश्वर करे वह इसी कारण से रुके हों इस से वह अपने घर की चिन्ता तो रखते होंगे। देखो कि कैसा ही अच्छा बना हुआ कुन्दन किया हुआ आभूषण क्यों न हो उसकी भी सुन्दरता थोड़े दिन में जाती रहती है। अब मेरे रूप से वह प्रसन्न नहीं होते तो जो कुछ मुझमें है भी उसे भी मैं रो कर बिगाड़ दूँगी और रोते रोते मर जाऊँगी।

ललना—संसार में कितने मूर्ख हैं जिन्हें डाह जलाये देता है।
(सब बाहर जाते हैं)

[दूसरा स्थान बाज़ार।]

(शिरीशनगर का अन्तपाल आता है)

शि० अन्त०—(आप ही आप) जो रुपया मैंने डमरू को दिया था वह तो अच्छी तरह सराँय में रखा है और वह मुझे खोजने को निकला है और बाज़ार में ढूँढ़ रहा है, भठियारी के कहने से जान पड़ता है कि इतने समय में मेरे पास नहीं आ सकता, परन्तु यह आया।

(शिरीशनगर का डमरू आता है)

क्यों बचा अब तुम्हारी हँसी हो चुकी; जब तुम्हें मार खाने की चाह हो तो मुझसे हँसी किया करो। क्यों वे यह तूने क्या कहा था कि मैं सराँय नहीं जानता और मुझको रुपया नहीं मिला और बहूजी ने घर पर भोजन करने को बुलाया है और मेरा घर बाज़ार में है। क्यों तू पागल होगया था जो मुझसे ऐसी ऐसी बातें कहता था और जवाब देता था।

शि० डम०—कैसा जवाब, साहब, मैंने ऐसी बातें, कब कही थीं।

शि० अन्त०—अबे यहीं तो अभी आधा घण्टा नहीं हुआ।

शि० डम०—जब से आपने मुझे सराँय में भेजा था तब से तो आप मुझे मिले ही नहीं।

शि० अन्त०—अबे पाजी तूने कहा कि मैं रुपया क्या जानूँ और स्त्री और खाने का हाल कहा। इसके लिये तुम जानते होगे कि हमको क्रोध हुआ था।

शि० डम०—मैं आपको इस समय प्रसन्न पाकर बहुत सुखी हूँ पर इस हँसी का अर्थ क्या है कृपा करके बता दीजिये।

शि० अन्त०—क्यों बे तू हमारे मुँह पर हमको मूर्ख बनाता है, गदहा (उसे मारता है)।

शि० डम०—कृपा करके हाथ रोकिये हँसी बहुत कड़ी हो गई, आप मुझे क्यों मारते हैं और मैंने क्या किया है।

शि० अन्त०—कारण यह है कि मैं तुमसे कभी कभी दिल्लगी से बातें करता हूँ और विदूषक का काम लेता हूँ तो अब तुम इतने मुँह चढ़े हो गये कि हमारी प्रीति को भी हँसी समझते और जब हम अपने काम में लगे रहते हैं उस समय भी अवसर नहीं देखते। जब सूरज चमकता है तब भभींरियाँ उड़ती है पर उसके डूबने पर छिद्रों में छिप जाती हैं। इसी भाँति तुमको भी हँसी का अवसर देखना चाहिये और जो निरर्थक बकोगे तो बचा हम तुम्हारा सिर तोड़ डालेंगे।

शि० डम०—जो आप मेरा सिर तोड़ डालेंगे तो मैं अपनी बुद्धि कहाँ रखूँगा। पर सरकार यह तो बताइये कि आपने मुझे क्यों मारा।

शि० अन्त०—क्या तुम नहीं जानते ?

शि० डम०—मैं तो सरकार इतना जानता हूँ कि मेरे ऊपर मार पड़ी है।

शि० अन्त०—तो फिर हम तुम्हें बता दें।

शि० डम०—और यह भी बताइये कि किस कारण।

शि० अन्त०—मुझे दिक करने और मूर्ख बनाने के लिये।

शि० डम०—भला कोई मेरी भाँति भी मनुष्य निरपराध मारा गया होगा। अच्छा सरकार मैं आपका कृतज्ञ हूँ।

शि० अन्त०—क्यों कृतज्ञ क्यों है।

शि० डम०—कृतज्ञ उस वस्तु का हूँ जो आपने मुझे बिना दाम दी है।

शि० अन्त०—हम कभी इसका बदला कर देंगे और किसी वस्तु के बदले में तुम्हें कुछ न देंगे पर यह तो बता कि खाने का समय आया।

शि० डम०—जी नहीं अभी माँस में उसी वस्तु की कमी है जो मुझ में है।

शि० अन्त०—वह क्या है?

शि० डम०—कोफ़्तः[१] होना।

शि० अन्त०—हाँ, तब ठीक होगा।

शि० डम०—जो ऐसा है तो आप उसे हाथ से न छूइये।

शि० अन्त०—क्यों? कारण।

शि० डम०—कदाचित् आप फिर गरम हो जाँय और मैं फिर कोफ़्तः होऊँ।

शि० अन्त०—अच्छा अवसर देख कर हँसा करो हर बात का अवसर होता है।

शि० डम०—जब आप गरम हुये थे उससे पहिले मैं इस बात को झूँठ कहता।

शि० अन्त०—किस नियम से।

---

१ कोफ़्तः होना का अर्थ कुट पिट जाना भी है।

शि० डम०—अजी सरकार नियम तो ऐसा ठीक है जैसे बाबा समय[१] की खोपड़ी ।

शि० अन्त०—भला सुनें तो क्या है ।

शि० डम०—जब कि आदमी का सिर आप ही मुडा हो जाता है तो फिर उसे अपने बाल जमाने का समय नहीं है ।

शि० अन्त०—क्या वह दवा और रुपया पैसा खर्च करने से नहीं पा सकता ?

शि० डम०—पहिले वह कुछ रुपया दण्ड की भाँति दे तो उसको और मनुष्य के सिर के बाल मिल जाँयगे और वह अपने सिर पर लगा ले ।

शि० अन्त०—फिर क्या कारण है कि समय के सिर पर बाल नहीं हैं बाल तो बहुतायत से बनाये जाते हैं ।

शि० डम०—सरकार कारण यह है कि यह बचत वह पशुओं को देता है और जितनी ही कमी मनुष्य में की है उसके बदले मनुष्य को बुद्धि दी है ।

शि० अन्त०—पर बहुत मनुष्य ऐसे है जिनकी खोपड़ी में बुद्धि कम बाल अधिक हैं ।

शि० डम—नहीं सरकार यों कहिये कि उनकी बुद्धि और हँसी निरी इसी काम के लिये होती है कि अपने बाल खोयें।

शि० अन्त०—नहीं तुमने तो यह अर्थ निकाला है कि जिनके सिर पर बाल अधिक होते हैं वह भोला होता है ।

शि० डम०—जितना ही निर्बुद्धि है उतनी ही शीघ्र खोता है पर खोता है तो भी हँसी ही में ।

---

१ अङ्गरेज़ी में काल का चित्र बनता है उसका सिर मुंडा होता है ।

शि० अन्त०—क्यों ?

शि० डम०—न्यायसंगत कारण से।

शि० अन्त०—न्यायसंगत न होगी।

शि० डम०—जो न्यायसंगत न होगी तो गुणकारी अवश्य होगी क्योंकि उसमें दो लाभ हैं।

शि० अन्त०—वह कौन हैं।

शि० डम०—एक यह है कि नाइ के पैसे बचते हैं और दूसरे यह कि भोजन करते समय में बाल नहीं गिरते।

शि० अन्त०—पर तुमने तो कहा था कि यह बतावेंगे कि किसी वस्तु का समय नहीं होता।

शि० डम०—तो मैंने बताया तो और क्या किया यह कि मैंने दिखाया कि जब मनुष्य के बाल गिर जाते हैं तो उन्हें फिर जमाने का समय नहीं है।

शि० अन्त०—पर तुम्हारी बात ठीक नहीं थी क्योंकि लोगों को समय नहीं है कि फिर जमा लें!

शि० डम० —मैं इस बात को इस भाँति ठीक किये देता हूँ। बाबा समय मुंडे हैं इस कारण से जब तक संसार है दास भी मुंडे होंगे।

शि० अन्त०—यह परिणाम अच्छा नहीं है पर देखो तो हमें कौन बुला रहा है और हमारे पास लपका आ रहा है।

(आद्रा और ललना आती हैं)

आद्रा—यह क्या बात है कि तुम अनजान की भाँति देखते हो और क्रोध करते हो। जान पड़ता है कि सङ्गति का रङ्ग और है कुछ ढङ्ग और है। किसी और स्त्री ने मोह लिया है अब हँसी और मुस्कराना उसीसे है। हाय हाय ! मैं तो न

आद्रा हूँ और न तुम्हारी स्त्री हूँ हाय ! एक दिन वह था कि विना कहे तुम इस बात पर शपथ करने को तयार थे कि हम को तुम्हारी बोली छोड़ और किसी की बोली प्यारी नहीं लगती तुम्हारे सिवाय और कोई वस्तु आँखों में अच्छी नहीं जान पड़ती और तुम्हारे शरीर को छोड़ और किसी वस्तु के छूने को जी नहीं चाहता और तुम्हें छोड़ और किसी के हाथ का बनाया हुआ और दिया हुआ भोजन अच्छा ही नहीं लगता। हाय यह क्या हुआ कि तुम बदल गये। अब हम अपने ही विराने हो गये क्यों कि अब तुम मुझे विराने की दृष्टि से देखते हो मैं तुम से किसी भाँति अलग नहीं हो सकती और मैं तो अब तुम्हारे शरीर का एक भाग हूँ। हाय, तुम मुझ से इस भाँति न भागो तुम यह समझो कि मेरा प्रेम ऐसा है कि तुम जो एक बूँद पानी समुद्र में डाल दो और फिर चाहो कि उतना ही न बढ़े और न घटने पावै समुद्र से निकालो। इसी भाँति तुम मुझ से अलग नहीं हो सकते जो तुम मुझ से अलग हो गये हो तो मैं इस तन से अलग हो जाऊँगी। क्यों आप को कैसा बुरा लगै जो आप सुनैं कि मैंने आप से छल किया और यह बदन जो आपके लिये है किसी और ने छुआ तो आप आग बबूला हो जाँयगे और मुझ पर थूकैंगे। मुझे लातैं मार कर निकालैंगे और मेरे शरीर से चमड़ा नोच लेगें और सदा के लिये मेरा त्याग कर के व्याह की अंगूठी तोड़ कर फेंक देंगे या नहीं। आप ऐसा कर सकते हैं तो फिर आप विचार कीजिये कि मेरे रक्त में भी गरमी है। क्योंकि जब हम और तुम

एक हैं और तुम छल करोगे तो मुझ में भी तुम्हारे शरीर से अपराध का विष आजायगा। इस विचार से तुम को चाहिये कि धर्म की राह न छोड़ो जिससे मुझमें धव्वा न लगे और तुम्हारी प्रतिष्ठा भी न घटै।

शि० अन्त—क्या सुन्दरी तुम मुझ से कहती हो। मैं तुमको तनिक भी नहीं जानता और मैं इस नगर में केवल दो घण्टे से हूँ। मैंने कभी तुम्हारे नगर को देखा है और न तुम्हारी बातें सुनीं। तुम्हारी एक बात भी मेरी समझ में नहीं आई यद्यपि मैंने बड़ी बुद्धि लड़ाई और बड़ा जतन किया।

ललना—जाओ भाई यह क्या कहते हो। तुम को क्या हो गया। तुम बहिन से कब ऐसा बरताव रखते थे। इसने तुमको अभी डमरू को भेज कर घर बुलाया था।

शि० अन्त०—डमरू को?

शि० डम०—मुझ को?

आद्रा—हाँ तुझको और फिर तूने घर लौट के यह उत्तर दिया कि इन्होंने मुझको मारा और मारते में कहा कि मेरा घर नहीं है और मेरी स्त्री नहीं है।

शि० अन्त०—क्यों रे तूने इस स्त्री से बातें की थीं। क्यों रे तेरा विचार क्या था।

शि० डम०—मैंने सरकार, मैंने तो अभी तक इसे देखा भी नहीं था।

शिव अन्त०—पाजी तू झूँठ बोलता है। तूने हाट में इनकी बातें कहीं थीं।

शि० डम०—मैं इससे उमर भर बोला ही नहीं।

शि० अन्त०—तो यह किस भाँति हम लोगों को नाम से पुकारती है कुछ ये गुप्त भेद जानती हैं?

आद्रा—देखो यह भलमसी नहीं है कि तुम मुझको झूठी सिद्ध करने के लिये दास से चालियापन कराते हो। अच्छा मेरा ही अपराध सही, आप निरपराध हैं पर ऐसी चितवनों से इसे और न बढ़ाओ। चलो मैं तुम्हारा आँचल पकड़ती हूँ तुम पेड़ हो मैं लता बनूँगी मैं अबला हूँ पर तुम्हारे बल से मिल कर अब किसी योग्य हुई हूँ। जो मेरा कुछ प्रभाव तुम पर हो गया हो तो यह एक दोष है जैसे अच्छी बेल के साथ घास पात भी पेड़ से लिपट जाते हैं। वह ठीक नहीं किये जाते इसी कारन वह आप के चित्त को बिगाड़ कर दुःख दे रहे हैं।

शि० अन्त०—देखो यह मुझ से कहती है और मेरा चित्त पिघलाती हैं क्या मेरा व्याह इसके साथ सपने में हुआ था? या मैं इस समय सपना देख रहा हूँ? और यह सब बातें सुन रहा हूँ यह क्या बात है जिससे आँख और कान दोनों धोखा खा रहे हैं? जब तक मैं इस भेद को अच्छी तरह न समझ लूँगा तब तक मुझ को इसकी बात मान लेने में कोई हानि नहीं जान पड़ती।

ललना—डमरू, जा सेवकों से कह कि चौका ठीक करें।

शि० डम०—हे ईश्वर रक्षा करो। मेरे सिर की कुशल रहै। यह देवियों का देस जान पड़ता है हे ईश्वर इस हानि से बचाओ। यहाँ हम भूत और चुड़ैलों से बातें कर रहें है जो मैं इनका कहना न मानूँगा तो यह मेरे प्रान ले

लेंगी या काले और नीले धब्बे शरीर भर में पड़ जाँयगे।

ललना—क्यों डमरू यह क्या बक रहा है और बात का उत्तर नहीं देता, बोल रे कामचोर।

शि० डम०—क्यों सरकार मैं बदल गया हूँ।

शि० अन्त०—हम तो जानते हैं कि तू बदल गया है और मैं भी बदल गया हूँ।

शि० डम० -नहीं सरकार बुद्धि भी फिर गई और रूप भी बदल गया।

शि० अन्त—रूप तो तेरा वही है।

शि० डम०—नहीं मैं बन्दर हो गया हूँ।

शि० अन्त०—जो तू बदला है तो गदहा हो गया है।

शि० डम०—ठीक है यह मुझ पर चढ़ने आती है मैं घास माँगता हूँ। ठीक है मैं गदहा हो गया हूँ नहीं तो यह कैसे हो सकता है कि मैं इन्हें न जानूँ और यह मुझ को जानें।

आद्रा—चलो चलो अब मैं ऐसी मूर्खता न करूँगी कि आप अपने हाथ से आँख कोंचें और रोवें जबकि सेवक और स्वामी दोनों मेरे दुःखों पर हँसते हैं। चलिये, खाना खाइए डमरू द्वार पर रह, आज मैं तुम्हारे साथ कोठे पर खाना खाऊँगी और तुम्हारे लंगरपन की चाल छुड़ाऊँगी। सुना रे जो कोइ सरकार को पूँछे तो कहना कि खाना खा रहे हैं और किसी को आने न देना। बहिन आओ। डमरू ड्योढ़ीदारी चैाकसी से करना।

बलें०—थोड़ा खाना और आवभगत अधिक होने से नेवते की शोभा अधिक हो जाती है।

इ० अन्त०—जी हाँ, जो गृहस्थ कंजूस है और पाहुना भी सङ्कोची। हमारा खाना अच्छा न बना होता हम आपको प्रसन्नता से जैसा कि हम आपको खिलायेंगे मिलना सहज है। तनिक ठहरिये, मेरा द्वार बन्द जान पड़ता है, कह दो खोल दें।

इ० डम०—चम्पा, चमेली, रगिया, भगिया होत।

शि० डम०—(भीतर से) गदहा, सुअर, सिड़ी, सौदाई होत! या तो दरवाज़े से दूर हो या चौखट पर बैठ जा। क्यों रे क्या तू स्त्रियों के बुलाने का मन्त्र पढ़ रहा है और तू इतनी बुलाता है। यहाँ तो एक ही बहुत होती हैं। जा दूर हो।

इ० डम०—यह कौन द्वारपाल की पूँछ बना हुआ है। अरे खोल सरकार राह में खड़े हैं।

शि० डम०—(भीतर से) कह दो जहाँ से आये हैं वहीं जाँय। कहीं पाँव में सर्दी न लग जाय।

इ० अन्त०—यह कौन बोल रहा है अरे खोल किवाड़।

शि० डम०—(भीतर से) जी हाँ, ठीक है मैं तुमको बता दूँगा जो तुम मुझे बता दोगे।

इ० अन्त०—अबे भोजन करने के लिये, मैंने अभी तक भोजन किया ही नहीं।

शि० डम०—(भीतर से) आज नहीं, आज यहाँ खाना नहीं मिलेगा और किसी समय आओ।

इ० अन्त०—अबे तू कौन है जो मुझे अपने घर में आने से रोकता है।

शि० डम०—(भीतर से) जी मैं इस समय द्वारपाल हूँ और मेरा नाम डमरू है।

इ० ड०—अबे पाजी तू ने मेरे नाम और काम दोनों चुरा लिये। जो तू आज मेरी जगह होता तो अपना चेहरा बदल डालता और अपना नाम गदहा रख लेता।

चमेली—(भीतर से) डमरू यह कौन हैं जो द्वार पर हल्ला कर रहे हैं।

इ० डम०—(चमेली से) सरकार को भीतर आने दो।

चमेली—(भीतर से) जी नहीं उनको आज बहुत देर हो गई।

इ० अन्त०—अरी सुनती है री भीतर आने देगी या नहीं।

चमेली—(भीतर से) मैं तो तुमसे पूँछने को थी।

शि० डम०—(भीतर से) और तुमने कहा नहीं।

इ० डम०—वाह तो आपने अच्छा बदला लिया।

इ० अन्त०—चुड़ैल ! आने देगी।

चमेली—(भीतर से) क्यों महाशय मैं आपको क्यों आने दूँ और किस के लिये।

इ० डम०—सरकार किवाड़े भली भाँति खटखटाइये।

चमेली—खटखटाने दो जब तक खटखटाया जाय।

इ० अन्त०—जो किवाड़ा खुल जायगा तो तुम चिल्लाओगी।

चमेली—(भीतर से) इसकी आवश्यकता क्या है एक जोड़ी मोजा चाहिये और बाज़ार में चिल्लाता फिरे।

आद्रा- (भीतर से) यह कौन है जो द्वार पर इतना हल्ला मचा रहा है।

शि० डम०—(भीतर से) ईश्वर की सौगन्ध आपके नगर में दुष्ट और लुच्चे बहुत हैं।

इ० अन्त०—तुम हो वाई तुमको पहिले ही से आना था।

आद्रा—(भीतर से) तुम्हारी बाई दुष्ट जा दूर हो द्वार पर से।

इ० डम०—यह दुष्ट तो बहुत ही बुरा हुआ।

अनर्गल—भाई यहाँ तो न भोजन है न आवभगत।

वले०—भाई हम तो इसी बात पर विवाद करते थे कि दोनों में कौन अच्छा है। सो यहाँ कुछ भी न मिला।

इ० डम०—सरकार वह लोग सड़क पर खड़े हैं। यहाँ बुला लीजिये और उनका सत्कार कीजिये।

इ० अन्त०—कुछ हवा बिगड़ी है दाल में काला अवश्य है जो हम आज भीतर नहीं जा सकते।

इ० डम०—जी हाँ जो आपके कपड़े पतले होते तो आज निस्सन्देह आप ऐसा कहते। आपकी खिचड़ी तो भीतर गरम हो रही है और आप सर्दी में खड़े हैं। यह वर्त्ताव जो पशु से भी किया जाय और जो ऐसा भाव ताव उसके लिये हो तो वह भी पागल होजाय न कि मनुष्य।

इ० अन्त०—जा कुछ ला तो हम किवाड़ा तोड़ डालें।

शि० डम०—(भीतर से) यहाँ तोड़ फोड़ करोगे तो हम तुम्हारा सिर तोड़ डालेंगे।

इ० डम०—भाई तुमसे कोई बात करे तो क्या हानि है। बातें तो हवा ही हैं और तुम्हारे ही मुँह पर कही जाती हैं। जिसमें पीछे कहने की आवश्यकता न रहे।

शि० डम०—(भीतर से) क्यों वे तू अभी राह पर नहीं आया
        दुर हो।

इ० डम०—तू और भी दुर हो अरे भीतर आने दे।

शि० डम०—जी हाँ जब चिड़ियों के पर गिर जाँयगे और
        मछलियों के पङ्ख न होंगे।

इ० अन्त०—बिना तोड़े काम न चलैगा जा एक बगुला कहीं
        से ला।

इ० डम०—क्यों सरकार बिना पर का बगुला आप कहते हैं; जो
        एक बगुले से काम चले तो मैं दो बगुले लाऊं।

इ० अन्त०—अबे जा बगुला नहीं बंसूला।

बले०—धीरज धरिये, महाशय ऐसा काम कहीं न कीजियेगा। इस
        में आप अपनी इज्ज़त के शत्रु होते हैं। आपकी स्त्री के
        चरित्र में धब्बा नहीं लगा है परन्तु, आपकी इस बात
        से सन्देह हो ही जायगा। इसके अतिरिक्त आप तो
        उन्हें बहुत दिन से जानते हैं कि कैसी बुद्धिमान हैं और
        आप अपनी प्रतिष्ठा को कितना समझते हैं और उनमें
        आज तक किसी भाँति का दोष नहीं लगा है। इससे
        जान पड़ता है कि कोई और बात है जिसे हम और
        आप नहीं जानते हैं और आप जान रखिये कि वह इस
        समय आपको बाहर रखने का कारण बता देंगी। इससे
        आप इस समय मेरा कहना मान लें और भोजन भवन में
        चल कर भोजन करें और साँझ को आप अकेले आइये
        और इस बात की जाँच कीजिये और जो आप इस
        गली में जहाँ बहुत लोग आते जाते हैं किवाड़ा तोड़
        कर घर में घुसना चाहेंगे तो लोग उसका और ही अर्थ

लगावेंगे और मक्खी मल कर भैंस करेंगे। अभी तक आपकी प्रतिष्ठा में बल नहीं आया परन्तु जब उनमें बात फैलेगी तो आपके मरण पर्यन्त रहेगी और मरने के पीछे भी लोग न भूलेंगे क्योंकि बदनामी वह बुरी बला है कि जो एक बेर किसी के पीछे लग गई तो कई पीढ़ी तक चली जाती है।

इ० अन्त०—अच्छा आप ही का कहना सही। हम यहाँ से चुपचाप चले जाँयगे। मुझको कोई प्रसन्न होने की बात नहीं है। परन्तु एक सुन्दर रण्डी के घर पर जो बहुत बातें करती है और हँसती भी है चल कर भोजन करें। उसीके साथ मेरी स्त्री ने कई बेर मुझको दोष लगाया है। वहीं चलकर भोजन करेंगे तुम घर जाओ और जञ्जीर लाओ। अब तो हम जानते हैं कि बन गई होगी। भाई तुम्हें शपथ है भोजनभवन में लाओ क्योंकि उस रण्डी का घर वहीं है। वह जञ्जीर हम उसको देंगे चाहे हमको उसके बदले में कुछ न मिले पर हमारी स्त्री तो जानेगी। कृपा करके जल्दी जाइये। जो हमको अपने ही घर में खाना नहीं मिलेगा तो हम कहीं और जाँयगे। देखें वह हमारे साथ कैसा बर्ताव करती है।

अनर्गल—अच्छा, तो हम आपको आध घण्टे में वहीं मिलेंगे।

इ० अन्त०—हाँ, हाँ, इस हँसी में हमारा ख़र्च भी होगा।

(सब बाहर जाते हैं)

[स्थान दूसरा—बाज़ार।]

(ललना और शिरीशनगर के अन्तपाल आते हैं)

ललना—तुम को क्या हो गया, कोई ऐसा भी करता है तुम पति का धर्म भूल गये। यह हो सकता है कि तुम्हारे प्रेम की बहार में प्रेम के नये पौदे सड़ जाँय, प्रेम का महल बनते ही बनने खण्डहर हो जाय। जो तुमने मेरी बहिन के साथ उसका धन और सम्पत्ति देख कर व्याह किया है तो उस-की ओर से रुखाई न करो। जो तुम्हारा मन कुछ करना चाहता है तो चोरी से करने में क्या हानि है। तुमको चाहिये कि जो तुम्हारा प्रेम सच्चा नहीं है तो उसको छिपाये रहो। ऐसा न करो कि बहिन तुमको देखते ही तुम्हारी आँखों से पहिचान ले। अपने मुँह को अपने ही लाज की तुरही न बनाओ। कृपादृष्टि से देखो. भली भाँति बोलो तो दोष छिपा रहेगा, बुराई को नेकी का जोड़ा पहिना दो, मन में चाहे पाप भरा हो पर दिखाने को सूरत ठीक रखो. पाप को पुण्य की चाल सिखाओ वह क्या जानें। कौन ऐसा चोर मूर्ख है जो अपनी चाल प्रकाश करेगा यह दूना दोष है कि एक तो अपने घर से भागे हो और फिर खाना खाने बैठे तो रूप से सच्ची बात प्रकट की। जो मनुष्य से चलते बने तो लाज से बहुत कुछ निवाह हो सकता है। परन्तु पाप तो रुखाई से दूने होजाते हैं। हाय बेचारी स्त्री ऐसीही भोली होती हैं कि किसी भाँति जो उनको विश्वास आ जाय कि कोई प्रेम करता है तो वह बिलकुल उसके बस में हो जाती हैं। चाहे बाँह और ही के अधिकार में हो हमें बहोरी

दिखाना बहुत है इससे भाई घर के भीतर जाओ। वहिन को धीरज बँधाओ प्रसन्न करो कहो जब थोड़ी सी नम्रता से झगड़ा मिटता है तो थोड़ा झूठ बोलना धर्म है।

शि० अन्त०—हम तुम्हारा नाम नहीं जानते और न हम यह समझते हैं कि तुमने हमारा नाम कैसे जान लिया। तुम अपनी सुन्दरताई में किसी देवी से कम नहीं हो। तुम स्वर्ग की अप्सरा हो तुम हीं बताओ कि मैं क्या करूँ मेरी समझ निर्बल और खोटी है। तुम अपनी बातों के छिपे विचार को कहो। तुम क्यों यत्न करती हो कि मैं अपने सच्चे मन के विरुद्ध फिरूँ। तुम कोई देवता हो तुम में मेरे मन सुधारने की शक्ति जो है तो मुझको बदल दो और मुझे स्वीकार है। पर जो मैं यही रहा जो अब हूँ तो तुम मेरी विनती सुन लो और वह यह है कि मैं भले जानता हूँ कि तुम्हारी वहिन जो इस समय रो रही है मेरी स्त्री नहीं हैं और न उन पर मेरा कोई अधिकार है। तुम अपने ही लिये क्यों नहीं कहतीं मैं तुम्हारे ऊपर प्राण देने को तैयार हूँ।

ललना—तुम सिड़ी तो नहीं हो गये हो जो ऐसी बातें कहते हो।

शि० अन्त०—पागल तो नहीं हूँ पर विक्षिप्त हो गया हूँ परन्तु मैं यह भी नहीं जानता कि किस प्रकार और क्यों।

ललना—यह आपकी आँखों का दोष है।

शि० अन्त०—हे सूर्य तुम्हारी चमक देखने से ऐसा हो गया है।

ललना—जहाँ तुम्हें देखना चाहिये वहाँ देखो तुम्हारी आँख ठीक हो जायगी।

शि० अन्त०—प्यारी, रात को ओर देखना तो न देखने ही के बराबर है।

ललना—तुम मुझे प्यारी क्यों कहते हो मेरी बहिन को कहो।

शि० अन्त०—तेरी बहिन की बहिन को कहता हूँ।

ललना—तो वह मेरी बहिन हुई।

शि० अन्त०—नहीं, नहीं, तुम्हीं हो, जो मेरे प्राणों की प्यारी हो मेरा जीवन सर्वस्व, मेरे सुख का आधार मेरे संसार का स्वर्ग और मेरे स्वर्ग की अधिष्ठात्री।

ललना—यह सब मेरी बहिन हैं। जो नहीं हैं तो उसको होना चाहिये।

शि० अन्त०—तुम अपने को कहो क्योंकि मैं तुम्हारीही हूँ। तुम्हारे ही साथ मैं प्रेम करता हूँ और तुम्हारे ही साथ अपना जीवन बिताऊँगा न तुम्हारा अभी तक व्याह हुआ है और न मेरा, लाओ हाथ।

ललना—अजी ठहरो मैं अपनी बहिन को लाती हूँ। देखूँ वह क्या कहती हैं।

(बाहर जाती है)

(शि० डमरू दौड़ता हुआ आता है)

शि० अन्त०—क्यों क्या है डमरू ? क्यों इतनी जल्दी भागा आता है।

शि० डम०—सरकार आप मुझको पहिचानते हैं मैं आपका दास डमरु हूँ और मैं जो था वह हूँ ?

शि० अन्त०—अबे तू डमरु है और तू हमारा नौकर है और तू जो था वह है।

शि० डम०—जी सरकार मैं गदहा हूँ मैं एक लुगाई का मानुस हूँ और मैं अपने सिवा और भी कुछ हूँ ।

शि० अन्त०—किस स्त्री का पुरुष है और अपने सिवा और क्या है?

शि० डम०—सरकार मैं अपने सिवा एक स्त्री का ऋणी हूँ वह ऐसी है कि मुझपर दावा करती है और मेरे पास बार बार आती है और मुझपर अधिकार करना चाहती है।

शि० अन्त०—तेरे ऊपर कैसा दावा करती है ।

शि० डम०—सरकार ऐसा दावा करती है जैसा कि आप अपने घोड़े पर करते हैं और मुझको पशु की भाँति रखना चाहती है मेरा अभिप्राय यह नहीं है कि मैं पशु हूँ इससे वह मुझ पर अधिकार करना चाहती है पर यह है कि वह पशु है ।

शि० अन्त०—वह कैसी है ।

शि० डम०—सरकार वह पूरी महन्त है ऐसी है कि बिना महन्त जी महाराज कहे उससे कोई बात न करे। उसके साथ ब्याह करने में मेरा भाग बहुत दुबला होगा और ब्याह मोटा होगा ।

शि० अन्त०—मोटा ब्याह कैसा ?

शि० डम०—सरकार वह रसोईदारिन है और नीचे से ऊपर तक तेल में डूबी है मैं नहीं जानता कि उससे कौन काम लिया जायगा । एक यही है कि उसकी बत्ती बनाई जाय और उसीके उजाले में उससे भाग जाय मैं इस बात का जिम्मा लेता हूँ कि उसके चिथड़े रूस के जाड़े भर जलेंगे और जो प्रलय तक जियेगी तो सब से एक अठवारा अधिक ।

शि० अन्त०—उसका रङ्ग कैसा है।

शि० डम०—बिलकुल मेरे जूते की तरह काली है। उसका चेहरा ऐसा है कि जब उसको पसीना आता है तो जो कोई चाहे तो उसके रङ्ग से बूट जूता रङ्ग ले।

शि० अन्त०—यह दोष धोने से दूर हो जायगा।

शि० डम०—जी नहीं यह जन्म का है प्रलय के पानी से भी न धुलेगा।

शि० अन्त०—उसका नाम क्या है।

शि० डम०—गजिया पर उसका पेट एक गज से अधिक होगा।

शि० अन्त०—तो वह चौड़ी भी है।

शि० डम०—बस जितनी सिर से पाँव तक है उतनी ही चौड़ी भी है वह पृथ्वी की तरह गोल है मैंने तो उसमें संसार के देश देखे।

शि० अन्त०—तो बताओ स्काटलैंड कहाँ है।

शि० डम०—मैंने उसे खड़बिड़ी और पहाड़ी देख कर हथेली में पाया।

शि० अन्त०—आयर्लैंड कहाँ है।

शि० डम०—सरकार पीछे होगा दल दल स्थान उसी ओर है।

शि० अन्त०—फ्राँस कहाँ है।

शि० डम०—माथे में क्योंकि वह उल्टा देख पड़ता है।

शि० अन्त०—और इङ्गलैंड कहाँ है।

शि० डम०—मैं खरिया की पहाड़ियाँ ढूढ़ता ही रहा मैंने उजली कोई जगह न देखी मैं समझता हूँ कदाचित् ठुड्ढी में हो क्योंकि फ्राँस और उसके बीच में खारा पानी बह रहा है।

शि० अन्त०—और स्पेन कहाँ है।

शि० डम०—सरकार मैंने नहीं देखा पर जान पड़ता है कि उस की गरम साँस वहीं से आती है।

शि० अन्त०—और अमेरिका कहाँ है।

शि० डम०—जी उसकी नाक पर है क्योंकि सब तरह के रत्न पुखराज और हीरे मानिक उस पर जड़े हैं।

शि० डम०—यह जादूगर या जो कोई हो उसने मुझ पर दावा किया और मेरा यह नाम लेकर पुकारा और सौगन्ध की कि मेरा व्याह तुम्हारे साथ हो गया और मेरे चिन्ह मुझको बताये और कहा कि तुम्हारे गले पर बड़ा सा तिल है और कन्धे पर बड़ा सा मसा। यह सुन कर मुझको बड़ा अचरज हुआ और डाइन समझ कर भागा। जो मेरे मन में धर्म और मेरा चित्त लोहे का न होता तो मुझको वह कुत्ता बना देती और मुझ से नाच नचाती।

शि० अन्त०—ले अब तू जल्दी सड़क पर जा और देख किस ओर की हवा है। इस नगर में रात को कभी न रहूँगा जो कोई नाव छूटती हो तो हमको बज़ार में मिलना जो यहाँ हमको सब जानते हैं और हम किसी को नहीं जानते तो फिर अब यह अवसर भाग ही जाने का है।

शि० डम०—अरे सरकार मैं तो इस स्त्री से ऐसा भागता हूँ जो मेरी स्त्री बनना चाहती है जैसे कोई मनुष्य अपना जीव लेकर रीछ से भागे।

(बाहर जाता है)

शि० अन्त०—इस नगर में जादूगर रहते हैं तो हमको यहाँ से चल ही देना चाहिये, जो मुझको स्वामी कहती हैं उससे मेरा मन घृणा करता है। हाँ उसकी सुन्दर बहिन जिसकी रानियों की सी चाल है और जिसके रूप और बातचीत दोनों में जादू भरा है उसने मेरा मन बदल दिया है। परन्तु जो मैं अपने पाँव में कुल्हाड़ी मारना न चाहूँ तो इस परी का राग न सुनने को अपने कान बन्द कर लूँगा।

(अनर्गल आता है)

अनर्गल—अन्तपाल जी।

शि० अन्त०—जी हाँ, मेरा यही नाम है।

अनर्गल—जी हाँ, मैं भले जानता हूँ लीजिये यह जञ्जीर मैं तो समझता था कि आप हाट में मिलेंगे। जञ्जीर में कुछ कसर थी इसीसे इतनी देर हो गई।

शि० अन्त०—तो अब आप मुझसे क्या चाहते हैं मैं इसको ले के क्या करूँ।

अनर्गल—जो आपका जी चाहे. मैंने आपके लिये बनाई है।

शि० अन्त०—मेरे लिये आपने बनाइ है मैंने कब कहा था।

अनर्गल—एक बार तो नहीं आपने मुझसे बीस बार कहा होगा जाइये घर में जाइये और अपनी स्त्री को प्रसन्न कीजिये साँझ को फिर आऊँगा तो आप मुझको इसका दाम दे दीजियेगा।

शि० अन्त०—महाशय रुपया लेना हो अभी ले लीजिये नहीं तो कदाचित् आप दोनों से हाथ धोवेंगे।

अनर्गल—आप तो हँसी करते हैं। प्रणाम!

(बाहर जाता है)

शि० अन्त०—क्या बात है कुछ हमारी समझ में नहीं आती परन्तु कौन ऐसा मूर्ख होगा जो ऐसी अच्छी ज़ञ्जीर न ले और जो ऐसा ही है कि राह चलते मनुष्य को सोने की वस्तु मिलती हैं तो यहाँ काम काज करने की क्या आवश्यकता है। बाज़ार चलें और देखें वहाँ डमरु आया है कि नहीं जो कोई जहाज़ आज जाय तो तुरन्त हम भाग चलें।

(बाहर जाता है)।

चौथा अंक।

[पहिला स्थान—बाज़ार।]

(एक व्यापारी अनर्गल और एक राजपुरुष आते हैं)

व्यापारी—देखो तुम्हें कब रूपया देना चाहिये था। हमने अब तक तुमको तंग नहीं किया। परन्तु अब हम जाते हैं और हमारे पास राह का ख़र्च नहीं है इससे तुम अभी सब रुपया दे दो नहीं तो हम तुमको इस राजपुरुष से पकड़वाते हैं।

अनर्गल—भाई जितना रुपया तुम्हारा हम पर चाहिये उतना ही अन्तपाल हमारा चाहते हैं और जैसे ही हम तुम से मिले हैं हमने उनको एक ज़ञ्जीर दी है। पाँच बजे हम को रुपया मिलैगा जो तुम कृपा कर के उनके घर पर चलो तो हम तुम को रुपया भी दे देंगे और कृतज्ञ भी होंगे।

(इप्सितनगर के अन्तपाल और इप्सितनगर के डमरू आते हैं)

अनर्गल—चलो इतना परिश्रम तुम्हारा बचा देखो वह आते हैं।

इ० अन्त०—देखो हम सुनार की दुकान पर जाते हैं और तू बाज़ार से एक रस्सी मोल ले आ। हम अपनी स्त्री उसके साथियों को देंगे। आज उन्होंने हम को बाहर खड़ा रक्खा इससे उनको यही पुरस्कार मिलैगा परन्तु सुनार तो वह है। जा हाट से रस्सी लाके हमको दे।

इ० ड०—तो रस्सी बड़ी अनमोल वस्तु है (बाहर जाता है)।

इ० अन्त०—आप पर जो विश्वास करे उसका तो अच्छा भला हो। आपने प्रतिज्ञा की थी कि हम अवैंगे और ज़ञ्जीर लावैंगे। न ज़ञ्जीर आई और न आप, कदाचित् यह समझे कि जो ज़ञ्जीर से बँधे रहे तो हमारी प्रीति बहुत दिन तक रहेगी इसीसे आप बैठ रहे।

अनर्गल—अच्छा अब आपकी हँसी हो चुकी यह कागद लीजिये इसमें सब लिखा है कि ज़ञ्जीर में सोना कितना है और बट्टा आदि सब मिल कर जो तीन चार रुपया के लगभग है। आप कृपा कर के रुपया दे दीजिये हम इस व्यापारी के ऋणी हैं और यह इसी रुपये के लिये ठहरे हैं नहीं तो अब तक जहाज़ पर चले गए होते।

इ० अन्त०—मेरे पास इस समय रुपया नहीं है और मुझे नगर में कुछ काम भी है आप कृपा कर के इनको भी मेरे घर पर ज़ञ्जीर समेत ले जाइये और मेरी स्त्री से कह दीजिये कि जंजीर लेकर रुपया दे दें। कदाचित् हम भी उसी समय पहुँचें जब आप पहुँचैंगे।

अनर्गल—तो आप ज़ञ्जीर उनके पास ले आवैंगे।

इ० अन्त०—नहीं आप ही लेते जाइये। कदाचित हमें वेर हो जाय।

अनर्गल—बहुत अच्छा हमीं लेते जाँयगे आपको पास ज़ञ्जीर है।

इ० अन्त०—जो मेरे पास न होगी तो आपके पास अवश्य ही होगी, नहीं तो आप विना रुपया पाए लौट आवैंगे।

अनर्गल—ल अब लाइये कृपा कर के ज़ञ्जीर दे दीजिये देखिये यह वेचारे इसीलिये ठहरे हैं और एक मेरे ही कारन रुके है।

इ० अन्त०—वाह वाह यह हँसी आप अपनी प्रतिज्ञाभंग के लिए कर रहे हैं, आपने कहा था कि हम चौक में मिलैंगे हम को चाहिये था कि हम आपको उराहना देते परन्तु कुलटा स्त्रियों की नाइं आप पहिले ही से हल्ला करने लगे।

व्यापारी—समय बीतता है महाशय, जो करना हो जल्दी कीजिये।

अनर्गल—(अन्तपाल से) आप देखते हैं कैसे वार वार रुपया माँग रहे हैं ज़ञ्जीर लाइये।

इ० अन्त०—जी मेरी स्त्री को दे दीजिये और अपना रुपया लीज्यिे।

अनर्गल—आप क्या नहीं जानते कि अभी थोड़ी वेर हुई मैं हमने आपको जंजीर दी. या जंजीर दीजिये या और कोई चिन्ह दे दीजिये।

इ० अन्त०—अब तो आपकी हँसी बढ़ती ही जाती है। लाओ जंजीर कहाँ है लाओ देखें तो।

व्यापारी—अजी महाशय, हम को इस समय रुपया चाहिये और आप को हँसी सूझती है। आप क्या उत्तर देते हैं। कुछ

हाँ या नहीं कहिये जो नहीं तो हम आपको भी राज-पुरुष को सौंपते हैं।

इ० अन्त०—मैं कहूँ मैं तुमसे क्या कहूं और क्यों कहूँ और का जवाब दूँ।

अनर्गल—कहोगे क्या रुपया लाओ जो जञ्जीर के लिये तुम्हें देना चाहिये।

इ० अन्त—हमें तुमको कुछ नहीं देना चाहिये, जञ्जीर पाई हो तब न।

अनर्गल—क्या तुम नहीं जानते कि मैंने तुमको जञ्जीर दी अभी आधा घटा भी नहीं हुआ।

इ० अन्त०—तुमने हमको जञ्जीर नहां दी। का।तुमने हमको वेईमान ठहराया है।

अनर्गल—तुम इस समय मुझ को झूठा बना रहे हो। देखते जाते हो मेरी इज्ज़त इस समय जाती है।

व्यापारी—अच्छा राजपुरुष तुम हमारे दावे पर इनको पकड़ो।

राजपुरुष—हम तुमको पकड़ते हैं और सरकार की ओर से कहते हैं कि तुम रोक टोक न करो।

अनर्गल—देखो इससे हमारी इज्ज़त जाती है या तो रुपया दो और नहीं तो हम तुम को इसी राजपुरुष को सौंपते हैं।

इ० अन्त०—तुम को रुपया देने को कहै और माल हमको मिला ही नहीं, पकड़ो बचा जो मर्द हो।

अनर्गल—राजपुरुष यह लो अपना कर और इसको भी पकड़ो। हम तो अपने भाई को भी न छोड़ें जो वह हमारी बे इज्ज़ती बाजार में करावै।

राजपुरुष—तो हम आप को भी पकड़ते हैं। दावा सुनते हैं।

इ० अन्त०—अच्छा भाई जब तक हम तुम्हें ज़मानत का रुपया न दें तब तक हम तुम्हारे बस में रहेंगे। परन्तु सुना बचा तुम इस हँसी का ऐसा फल पाओगे और ऐसा भुगतोगे कि याद करोगे। दूकान तक न बिकवा लूँ तो कहना।

अनर्गल—जी हाँ इप्सितनगर में क़ानून है आप के ऊपर कुछ रियायत न करैगा और आप भी भली भाँति बदनाम होंगे तो जान पड़ैगा।

(शिरीशनगर का डमरू आता है)

शि० डम०—सरकार अपदमननगर की ओर एक नाव आज जायगी और अपने स्वामी की राह देखती हुई ठहरी है। मैं अपना असबाब लाद आया और तेल और मलहम आदि सब मैंने मोल ले लिया। जहाज चलने को खड़ा है और हवा समुद्र की ओर चल रही है और किसी वस्तु की देर नहीं है, मालिक आजाय और आप चलें।

इ० अन्त०—अबे पागल हो गया है क्या ! कौन जहाज़ मेरे लिये ठहरा है।

शि० डम०—आपने नहीं भेजा था कि यहाँ से चलने के लिये एक जहाज़ ठीक करो।

इ० अन्त०—कुछ मदिरा तो तूने नहीं पी है अबे हमने तुझे रस्सी लेने भेजा था या नाव करने।

शि० डम०—अरे सरकार आप ने मुझे रस्सी लेने भेजा था कि खाड़ी में जहाज़ करने भेजा था।

इ० अन्त०—अच्छा बचा जब छुट्टी मिलैगी तो हम तुम को बतावेंगे और तुम्हारे कानों को समझा देंगे कि हमारी बातें ध्यान से सुना करें। इस समय आद्रा के पास जा और उनको यह कुंजी दे कर कहना कि जिस सन्दूक के ऊपर रूम की दरी पड़ी है उसमें से रुपयों की थैली जल्द भेज दें और यह कहना कि हम गली में पकड़े गये हैं और उसी से हमारी ज़मानत होगी और छूटेंगे। जा जल्दी जा चलो राजपुरुष बन्दीघर की ओर तब तक यह पहुँच जायगा।

(व्यापरी अनर्गल सिपाही अन्तपाल बाहर जाते हैं)

शि० डम०—आद्रा के पास! जहाँ हम लोगों ने आज भोजन किया है और जहाँ एक स्त्री मुझे भतार बनाती है। अरे दैया रे दैया हमारे जोग तो नहीं बहुत मोटी है। परन्तु जाना मुझे ज़रूर है चाहे जी चाहै या न चाहै क्योंकि दास को क्या स्वामी जो कहै करना ही चाहिये।

[दूसरा स्थान-शि० अन्त का घर]

(आद्रा और ललना आती हैं)

आद्रा—(ललना से) तुमको ऐसे ही बहकाते थे तुमने उनकी आँखों से देखा कि सच मुच कहते थे या हँसी करते थे उनके मुँह का रंग कैसा था लाल था कि पीला उदास थे या प्रसन्न तुम ने उनके मन की कौन सी बात उनके चेहरे से जानी।

ललना—पहिले तो उन्होंने हम से यही कहा कि तुम्हारी वहिन का हमसे कुछ नाता नहीं है।

आद्रा—तो उनका आशय यह था कि हम से उनसे कुछ नाता नहीं है। इसमें मेरी और भी वे इज्ज़ती हुई।

ललना—फिर सौगन्ध की और कहा कि हम परदसी हैं।

आद्रा—सच तो कहा पर झूठी सौगन्ध खाई।

ललना—और फिर मैंने तुम्हारी ओर से कहा।

आद्रा—तो उन्होंने क्या उत्तर दिया?

ललना—हमने उनसे कहा कि तुम हमारी वहिन को प्यार करो और उन्होंने हम से कहा कि तुम हम को प्यार करो।

आद्रा—भला उन्होंने किस भाँति तुम को वहकाया।

ललना—भाँति क्या भाँति वही जो होती है जो अनुचित व्योहार न होता। पहिले उन्होंने मेरी सुन्दरता सराही और फिर मेरी वात चीत वखानी।

आद्रा—और तुमने उनको क्या उत्तर दिया।

ललना—धीरज धरो।

आद्रा—मैं धीरज धरूँ मुझ से धीरज नहीं धरा जायगा मेरा मन नहीं मानता तो क्या करूँ पर मुँह में जो आवैगा कहूँगी। वह हैं क्या किस घंमड में भूले हैं, कुरूप सब से बढ़ कर टेढ़ा वदन आयु अधिक चेहरा भद्दा वना हुआ, वदन उससे भी बढ़ कर कोई अंग ठीक नहीं मूर्ख वेईमान रूप में बुरे और शील में उससे भी बुरे।

ललना—जो ऐसे ही हैं तो उनके लिये जलना मूर्खता है। जो कोई वस्तु खोटी हो तो उसके खो जाने का क्या दुःख है।

आद्रा—पर जो कुछ मुँह से कहती हूँ उससे बहुत ही बढ़कर मेरा मन उन्हें समझता है परन्तु फिर भी मैं चाहती हूँ कि औरों के देखने में इससे भी खोटे रहें। चिड़िया अपने घोंसले से दूर चिल्लाती है वैसे ही मैं हूँ मेरा मन उन के लिये कलप रहा है मुँह से बुरा कहा तो क्या ।

(शिरोशनगर का डमरू आता है)

शि० डम०—यह ले जाओ सन्दूक थैली जल्दी जल्दी ।

ललना—अबे तू बेदम क्यों हो गया है और हाँफता क्यों है।

आद्रा—सरकार कहाँ है डमरू अच्छे हैं क्या हाल है ।

शि० डम०—नहीं नहीं वह तो ऐसी जगह हैं जो नरक से बुरी है एक पिसाच जो बदामी कपड़े पहिने है उनको पकड़े है । मनुष्य क्या पिशाच है उसके कठोर हृदय पर लोहे के बटन लगे हैं । दैत्य है या राछस नीचे से ऊपर तक मलीदे का अंगरखा पहिने है,भेड़िया है बरन उससे भी अधिक निर्दय पीछे से पकड़ने वाला और पतली गलियों का हाकिम और जो फ़ैसला के पहिले नरक में डालता है।

आद्रा—अबे बता तो बात क्या है ?

शि० डम०—मैं बात नहीं जानना वह एक मुकदमे में धरे गये हैं ।

आद्रा—किस के मुकदमे में धरे गये हैं और किसने उनको पकड़ा ।

शि० डम०—यह तो मैं नहीं जानता कि किस के मुकदमा में पकड़े गये पर जानता हूँ उनको जिसने पकड़ा है वह

मलीदे के कपड़े पहिने हैं आप .उनकी ज़मानत का रुपया देगी रुपया सन्दूक में है।

आद्रा—बहिन ले आओ बड़े अचरज की बात है कि वह बिना मुझे बताए कर्ज़ा लेते हैं क्या वह पकड़े गये हैं?

शि० डम०—तमस्सुक पर नहीं ज़न्जीर से बाँधे गये हैं ज़न्जीर ज़न्जीर क्या तुम बोलतीं नहीं सुनती।

आद्रा—क्या ज़न्जीर?

शि० डम०—जी ज़ञ्जार नहीं घंटा। घंटा। मुझ से कहता है कि जल्द भाग चलो मैं उनके पास से दो बजे चला था अब एक बज गया।

आद्रा—क्या घंटे लौट गये हमने तो आज तक नहीं सुना था?

शि० डम०—जो घटा राजपुरुष को देखै तो डर के मारे लौट पड़े?

आद्रा—क्या समय भी देवालिया है, कैसी मूर्खता की बातें करता है।

शि० डम०—जी समय बड़ा देवालिया है और अपने धन से अधिक ऋतु का देनदार है और चोर भी है। आपने लोगों को कहते नहीं सुना कि समय चोरी से दिन रात में आता है। जो समय चोर है और ऋनी है और सिपाही उसे राह में मिलै तो क्या वह दिन में एक घंटा भी पीछे न हट जायगा?

(ललना आती है)

आद्रा—लो डमरू रुपया ले और जल्दी जा, अपने स्वामीं को जल्दी घर ले आ, आओ बहिन हमको बड़ी चिन्ता है।

(सब बाहर जाते हैं)

[स्थान तीसरा-बाज़ार।]

(शिरीशनगर का अन्तपाल आता है)

शि० अन्त०—जो मुझे बाज़ार में मिलता है बातें करता है मानो मैं इनका बड़ा पुराना मित्र हूँ और मेरा नाम लेकर मुझे पुकारता है। कोई रुपया देता है, कोई भोजन करने के लिये बुलाता है, कोई कृपा करने के लिये धन्यवाद देता है, कोई मोल लेने के लिये वस्तु दिखाता है। अभी एक दरज़ी ने दूकान पर बुलाया और कुछ रेशमी कपड़े दिखाये और कहा कि मैंने आपके निमित्त लिये हैं और फिर मेरा वदन नाप लिया। इसमें सन्देह नहीं कि यहाँ धोखा दिया जाता है और यह सब डिठवन्दियाँ हैं और वड़े वड़े जादूगर यहाँ वसते हैं।

(शिरिशनगर का डमरू आता है)

शि० डम०—लो सरकार रुपया लो क्या तुमको पिशाच के फन्दे से छुट्टी मिली।

शि० अन्त०—कौन पिशाच ?

शि० डम०—अरे सरकार वह पिशाच नहीं जो नर्क में रहता है वह पिशाच जो बन्दीघर का रखवाला है वह जो गाय की खाल ओढ़े फिरता है वह जो आप के पीछे पिशाच की भाँति आया और आप से बोला, कि अपनी स्वाधीनता छोड़ दीजिये।

शि० अन्त०—मैं तेरी बात नहीं समझा।

शि० डम०—नहीं सरकार साफ़ तो है, अरे वही जो सारंगी की भाँति खोल में बँधा चलता है और जब लोग थक जाते हैं तो पकड़ के बैठाता है अरे सरकार वह गये बीते हुये की सुध लेता है और बादामी कपड़े पहिनता है और जो अपना सोंटा दिखा कर नट के डंडे से भी अधिक करतब करता है।

शि० अन्त०—क्या तू सिपाही को कहता है?

शि० डम०—जी हाँ कैदियों का गुरू, जो अपना बन्द तोड़ता है उससे जबाब लेता है, वही जो रात के समय लोगों से जागने को कहता है।

शि० अन्त—अच्छा हँसी रहने दो, आज साँझ को कोई जहाज़ जायगा, चलें।

शि० डम०—जी मैं तो आप से एक घटा हुआ कह गया कि एक जहाज़ आज रात को चलैगा और उस समय आप को देर करने के लिये सिपाही ने रोका था। आप ने अपने छूटने के लिये जो देवदूत बुलाये थे वह यह हैं।

शि० अन्त०—यह पागल हो गया है और इसकी सुधबुध ठिकाने नहीं है और यही मेरी भी दशा है। हम लोग यहाँ जादू की नदी में फिर रहे हैं, ईश्वर बचावै।

(एक रण्डी आती है)

रण्डी—भले मिल गये राह ही में मिल गये; क्यों महाशय आप को सुनार मिला, यही जंजीर है जो आपने मुझे देने को कहा था।

शि० अन्त०—शैतान मैं तुझसे कहता हूँ कि मुझे न बहका।

इ० डम०—सरकार यह क्या शैतान की स्त्री है?

शि० अन्त०—यही पिशाच है ?

शि० डम०—जी नहीं, शैतान से बढ़ कर है यह शैतान की मौसी है और युवती और सुन्दरी बनकर आई है। वह मनुष्यों के पास चमकते हुये देवदूत के भेष में आती है। चमक. आग से पैदा हुई है और आग जलती है इसी भाँति स्त्रियाँ भी जलेंगी। इसके पास न जाइये।

रण्डी—आपका दास और आप दोनों आज बहुत प्रसन्न हैं। हँसी ही सूझती है। आप साथ चलेंगे। चलिये यहीं खाना खाँय।

शि० डम०—सरकार जो इसके साथ खाना चाहोगे तो तुमको एक ही चम्मच खाने को मिलेगा या बड़ा चम्मच रखिये।[१]

शि० अन्त०—क्यों डमरू ?

शि० डम०—अरे सरकार जो पिशाच के साथ खाय उसे बड़ा चम्मच रखना चाहिये।

शि० अन्त०—दुर हो भुतिनी, तू भोजन करने को कहती है। तू डाइन है जैसे कि सब तेरे नगरवाले हैं, हम मन्त्र पढ़ते हैं, तू हमको छोड़ दे और चली जा।

रण्डी—जी जो अँगूठी आपने मुझसे भोजन करने के समय ली थी वह मुझे फेर दीजिये या जो ज़ञ्जीर आपने देने को कहा था वह दीजिये मैं चली जाऊँगी और आपको न छोड़ूँगी।

शि० डम०—कोई कोई भूत मनुष्य का नख या बाल माँगते हैं, पर यह सबसे अधिक लालची है और ज़ञ्जीर माँगती

---

१ शैतान के साथ खाना खाने में बड़ा कौर उठाना चाहिये।

है। सरकार, सँभल के चलना जो तुम इसे ज़ञ्जीर दे दोगे तो पिशाच ज़ञ्जीर हिला कर हमको डरावेगा।

रण्डी—आप कृपा करके मेरी अँगूठी दे दीजिये या ज़ञ्जीर दीजिये। मेरी समझ में आपका यह विचार नहीं है कि मुझे धोखा दें।

शि० अन्त०—दुर हो डाइन, डमरू चलो भाग चलें।

शि० डम०—वाह जानती हो मुर्ग़ा बोलता है दूर गरूर।

(शि० अन्तपाल और शि० डमरू बाहर जाते हैं)

रण्डी—इसमें सन्देह नहीं कि अन्तपाल पागल हो गये हैं, नहीं तो वह कभी ऐसा न करते। चालीस रुपये की एक अँगूठी आज मुझसे ली और उसके बदले मुझको एक ज़ञ्जीर देने को कहा पर इस समय दोनों से नाहीं की। इसका कारण मुझे यही जान पड़ता है कि वह पागल हो गये हैं। इनके क्रोध का कुछ यही प्रमाण थोड़ा ही है। आज उन्होंने एक विचित्र विना सिर पैर की कहानी भोजन करने के समय सुनाई कि हमारे किवाड़ बन्द थे और घर जाने नहीं पाये। कदाचित् यह कारण हो कि उनकी स्त्री उनके दौरे का हाल जानती थी इसीसे उन्होंने किवाड़ा बन्द कर लिया। अब मैं बस यही करूँ कि उनके घर जाऊँ और उनकी बहू से कहूँ कि आज पागलपने से मेरे घर में घुस गये और बरजोरी से मेरी अङ्गुली से अँगूठी निकाल ली। बस, यही अच्छी चाल है! चालीस रुपये थोड़े नहीं हैं जो इस भाँति हाथ धो बैठें।

(बाहर जाती है)

[चौथा स्थान—बाज़ार ।]

(इ० अन्तपाल और राजपुरुष आते हैं)

इ० अन्त०—डरो न भाई हम न जाँयगे और जो जाँयगे तो जितने के हम ऋणी हैं उतना देकर जाँयगे। हमारी स्त्री बड़ी दुष्ट है। जान रखो कि आज हमारे पकड़े जाने का हाल सुन कर उसको बुरा लगेगा।

(इ० डमरू रस्सी लेकर आता है)

यह देखो हमारा नौकर आता है इसके पास रुपया होगा। क्यों रे लाया जो हमने मँगाया था।

इ० डम०—जी हाँ, यह क्या है यह सब के लिये पूरी होगी।

इ० अन्त०—पर रुपया कहाँ है ?

इ० डम०—जो मेरे पास जो कुछ था सब मैंने रस्सी वाले को दे दिया।

इ० अन्त०—क्यों वे तूने पाँच सौ रुपये रस्सी के लिये दे दिये।

इ० डम०—अरे सरकार मैं इसी हिसाब से आपको पाँच सौ ला दूँगा।

इ० अन्त०—हमने तुझे किस काम के लिये घर भेजा था ?

इ० डम०—सरकार आपने रस्सी लेने भेजा था और मैं रस्सी लाया।

इ० डम०—और इसीसे आप मार भी खाँयगे। (मारता है)

राजपुरुष—साहब, धीरज धरिये।

इ० डम०—जी नहीं, धीरज तो मुझे धरना चाहिये; दुःख में तो मैं हूँ।

राजपुरुष—ले अच्छा अब चुप रह।

इ० डम०—इनसे कहो कि अपना हाथ रोकें।

इ० अन्त०—पाजी, नीच, मूर्ख।

इ० डम०—सरकार मैं तो चाहता हूँ कि नासमझ होता तो मुझे घूँसे के मार की समझ न होती।

इ० अन्त०—तुम बचा मार ही समझते हो, गदहे की भाँति।

इ० डम०—जी हाँ, मैं गदहा ही हूँ आप देखते नहीं कि मेरे कान बड़े बड़े हैं। मैंने जन्म लेने के समय से आज तक इनकी सेवकाई की है और मुझको अभी तक इन्होंने घूँसा छोड़ और कुछ नहीं दिया। जब मुझे सर्दी लगती है तो मार कर गरम करते हैं; और जब गर्मी लगती है तो मार कर ठण्डा करते हैं, जब सोता हूँ तो मार कर जगाते हैं, जब बैठा रहता हूँ तो मार के उठाते हैं और घर के भीतर से बाहर इसी घूँसे की बदौलत जाता हूँ। मैं तो इसे अपनी पीठ पर लादे फिरता हूँ जैसे बन्दरिया अपने बच्चे को ले जाती है और जो इनकी नौकरी में मेरी टाँग भी टूट जायगी तो मैं इसे लिये हुये द्वार द्वार भीख भी मागूँगा।

इ० अन्त०—चलो वह देखो हमारी स्त्री आती है।

(आद्रा, ललना ओझा और एक रण्डी आती है)

इ० डम०—बहू जी अपने परिणाम को समझो।

इ० अन्त०—क्यों बे बोलता ही जायगा। (मारता है)

रण्डी—देखो अब तुम क्या कहती हो, तुम्हारे स्वामी पागल हो गये हैं या नहीं।

आद्रा—इनकी दशा और भी इस बात को पक्की करती है। बाबाजी तुम तो झाड़फूँक भी करते हो इनको किसी भाँति ठीक करो जो यह फिर अच्छे हो जाँयगे तो जो माँगोगे मैं दूँगी।

ललना—देखो कैसी लाल लाल आँखें निकाल रहे हैं।

रण्डी—और देखो तो पागलपन से कैसे काँप रहे हैं।

ओझा—हमें अपना हाथ दीजिये आपकी नाड़ी देखें।

इ० अन्त०—यह लो मेरा हाथ और मेरी नाड़ी का हाल कानों से सुनो। (उसे मारता है)

ओझा—(ठहर कर) अरे पिशाच, हम सब देवताओं की दुहाई देते हैं तू मेरी विनती सुनकर इसको छोड़ दे और नरक को चला जा।

इ० अन्त०—अरे चुप ओझा की पूँछ चुप रह मैं पागल नहीं हूँ।

आद्रा—तुम्हारी सुध ठिकाने होती तो काहे को यह दशा होती।

इ० अन्त०—दुर बेसवा यही तेरे गाहक हैं, यही जो उल्लू का सा मुँह लिये हैं, यही आज तेरे साथ खाना खाता रहा और मेरे लिये किवाड़ा बन्द कर दिया था और मैं अपने ही घर में आने नहीं पाया।

आद्रा—मेरा ईश्वर जानता है कि तुमने घर पर भोजन किया और वहाँ अब तक जो तुम रहते तो बीच बाज़ार में ऐसी बेइज्ज़ती क्यों होती।

इ० अन्त०—मैंने घर में खाना खाया, क्यों बे तू क्या कहता है।

इ० डम०—सरकार सच तो यह है कि आपने आज घर में खाना नहीं खाया।

इ० अन्त०—क्या हमारा द्वार बन्द नहीं था और बाहर ही नहीं खड़े रहे।

इ० डम०—सरकार सौगन्ध करता हूँ आपका किवाड़ा बन्द था और आप बाहर खड़े रहे।

इ० अन्त०—और इसने भी हमको बुरा कहा और गाली दी कि नहीं?

इ० डम०—इसमें क्या सन्देह है कि इन्होंने आपको बुरा कहा!

इ० अन्त०—इसकी लौंडी ने हम को गाली दी और बुरा भला कहा।

इ० डम०—जी हाँ, उसने भी कहा लौंडी ने भी बुरा भला कहा।

इ० अन्त०—और क्या हम क्रोध में आ कर वहाँ से नहीं चले गये।

इ० डम०—जी हाँ, आप ज़रूर चले गये। मेरी हड्डियाँ साखी हैं। उस समय आपके क्रोध का वेग उन्हीं पर उतरा था।

आद्रा—क्यों बाबाजी ऐसी बेसिर पैर की बातों में इनको ठीक करना चाहिये।

ओझा—इसमें कौन बात है नौकर भी मालिक की भाँति बिगड़ा हुआ है और उन्हीं के साथ मिलकर उनके पागलपन का साथ देता है।

इ० अन्त०—तुम्हीं ने सुनार को बहकाया था कि हमको पकड़ा कर बेइज़्ज़ती करावे।

आद्रा—जी मैंने तो इसी डमरू के हाथ रुपया भेज दिया था। यही दौड़ता हुआ गया था।

इ० उम०—मैं रुपया लाया। सरकार मैं तो अपने हाथ पाँव लाया था पर रुपया तो मेरे पास नाम को भी न था।

इ० अन्त०—क्यों वे तू इसके पास रुपयों की थैली लेने गया था या नहीं।

आद्रा—और मेरे पास आया और मैंने थैली इसे दे दी।

ललना—और मैं साखी हूँ कि इन्होंने थैली दी।

इ० उम०—ईश्वर और रस्सी वाला साखी है कि मैं रस्सी ही लेने गया था।

ओझा—बाईजी मुझे जान पड़ता है कि मालिक और नौकर दोनों पर भूत चढ़ा है। आप देखती नहीं हैं कि इनके चेहरे मुर्दे के से हो रहे हैं जिनके देखने से डर लगता है। इन सब को बाँध कर अँधेरी कोठरी में रखना चाहिये।

इ० अन्त०—क्यों जी तुमने आज किवाड़ा बन्द रक्खा था और क्यों वे तू थैली लेना अस्वीकार क्यों करता है?

आद्रा—मैंने तुमको बाहर खड़ा नहीं रक्खा।

इ० उम०—सरकार मैंने थैली नहीं पाई। हाँ, इतना जानता हूँ कि द्वार बन्द था।

आद्रा— पाजी, तेरी दोनों बातें झूठी हैं।

इ० अन्त०—वेसवा तेरी सारी बातें झूठी हैं और पाजियों के साथ मिली है जिसमें मुझको बीच बाज़ार में बेइज्ज़त करावे। इस हँसी के लिये जो तुम बड़े चाव से देखती हो और जिसमें मेरी इज्ज़त जाती है तुम्हारी आँखें फोड़ दूँगा।

आद्रा—अरे कोई इन्हें बाँधो, जल्दी बाँधो, मेरे पास न आने दो।

ओझा—दौड़ो, दौड़ो और लोगों को बुलाओ भूत बड़े ज़ोर पर हैं।

ललना—हाय देखो तो बिचारे कैसे पीले हो गये हैं।

(तीन चार मनुष्य आते हैं इ० अन्तपाल और इ० डमरू को बाँधते हैं)

इ० अन्त०—क्या तू हमको मार डालेगी? क्यों राजपुरुष हम तेरे पहरे में हैं? क्या तू चाहता है कि यह लोग बरजोरी से हमको तुझसे छुड़ा ले जाँय?

राजपुरुष—छोड़ दो यह हमारा बन्धुआ है। इसको तुम नहीं छू सकते।

ओझा—इस दास को भी बाँध लो, यह भी पागल हो गया है।

आद्रा—तू क्या करेगा राजपुरुष, तुझे यह बात अच्छी लगती है कि एक मनुष्य अपनी बेइज़्ज़ती पागलपन में आप करावे?

राजपुरुष—यह हमारा बन्धुआ है। जो हम इसे छोड़ देंगे तो जो इसका ऋण है वह तुमको देना होगा।

आद्रा—मैं तुझको दे दूँगी, चल मुझको महाजन के पास ले चल। देखूँ तो कैसा ऋण है। बाबाजी देखो इनको भली भाँति ले जाओ और मेरे घर में पहुँचा दो, हाय ऐसा बुरा दिन आया।

इ० अन्त०—हा तेरी नोच की।

इ० डम०—देखो सरकार मैं तुम्हारे कारण पकड़ा गया।

इ० अन्त०—अबे दूर हो तू हम को क्यों चिढ़ा कर पागल करता है।

इ० डम०—तो क्या आप ऐसे ही बाँधे जाँयगे। पागल बन जाइये और भूतों को पुकारिये।

ललना—ईश्वर बचावे देखो तो कैसी बेसिरपैर की बातें कर रहे हैं।

आद्रा—ले जाओ, इनको यहाँ से ले जाओ, चलो बहिन साथ चलें।

(ओझा इ० अन्तपाल और इ० डमरू और मनुष्यों के साथ बाहर जाते हैं)

राजपुरुष—एक अनर्गल नाम सुनार है तुम उसे जानती हो।

आद्रा—हाँ, मैं जानती हूँ कितना रुपया उसका चाहिये।

राजपुरुष—दो सौ रुपये।

आद्रा—और यह उधार क्यों लिया।

राजपुरुष—एक ज़ञ्जीर तुम्हारे स्वामी ने ली थी उसी का मोल है।

आद्रा—एक ज़ञ्जीर की बात तो उन्होंने मुझसे भी कही थी पर उनके पास तो नहीं थी।

रण्डी—और आज आपके स्वामी मारे क्रोध के मेरे यहाँ आये और मुझसे बरजोरी से अँगूठी जो इस समय वह पहिने थे ले ली और थोड़ी देर पीछे मैंने उनको एक ज़ञ्जीर लिये देखा।

आद्रा—होगा पर मैंने नहीं देखा। राजपुरुष, चलो हमको सुनार के पास ले चलो देखें बात क्या है?

(शिरीशनगर का अन्तपाल नङ्गी तलवार लिये और शि० डमरू आते हैं)

ललना—भगवान् बचावे, यह तो फिर छूट गये।

आद्रा—और नङ्गी तलवार लिये आते हैं और लोगों को बुलाओ, फिर बाँधो।

राजपुरुष—भागो, भागो यह तुमको मार ही डालेंगे।

(आद्रा ललना रण्डी और राजपुरुष बाहर जाते हैं)

शि० अन्त०—देखो यह डाइन तलवार से डरती हैं।

शि० डम०—अरे सरकार जो आपकी बहू बनती थी वह आप ने भाग गईं।

शि० अन्त०—बन्दरगाह में जल्दी चलो, असबाब उठाओ और जल्दी जहाज़ पर सवार हो जाओ।

शि० डम०—ऐ सरकार आज रात को यहीं ठहरिये। यह कुछ हमारी हानि थोड़े ही करेंगी, आपने देखा कि सब हम लोगों का कितना आदर करते हैं और सोने की वस्तु देते हैं। मैं तो जानता हूँ कि यह सब लोग बड़े भले मानुस हैं जो वह माँस का पहाड़ न होता जो मुझसे विवाह का दावा करती है तो मैं यहीं ठहरता और जादूगर हो जाता।

शि० अन्त०—मुझे तो कोई जो इस नगर का राज दे तो मैं न ठहरूँ। जल्दी चलो असबाब जहाज़ पर लादो।

(सब बाहर जाते हैं)

पांचवां अंक।

[स्थान पहिला—एक मन्दिर के आगे।]

(एक व्यापारी और अनर्गल आते हैं)

अनर्गल—महाशय मुझ को बड़ा खेद है कि मेरे कारण आप ठहरे हुए हैं पर मैं सौगन्ध खाता हूँ कि मैंने ज़ञ्जीर

दी है अब वह बेईमानी करके अस्वीकार करते हैं।

व्यापारी—नगर में और लोगों की इनके बारे में क्या राय है।

अनर्गल—महाशय और लोगों की राय इनके बारे में ऐसी है जैसी किसी के बारे में न होगी। इनका विश्वास ऐसा है जिसकी सीमा नहीं। सब छोटा बड़ा इनको चाहता है। इनके बराबर कोई इस समय नगर में हो तो ले इनकी बात पर मेरी कुल सम्पत्ति मिल सकती है।

व्यापारी—धीरे धीरे बोलो देखो वह आते हैं।

(शि० अन्तपाल और शि० डमरू आते हैं)

अनर्गल—हाँ आते तो हैं और वही जञ्जीर गले में पहने हैं और मेरे आगे झूठी सौगन्ध खाई कि मैंने नहीं पाई। आप तनिक इनके समीप चलिये हम इनसे कुछ कहेंगे। अन्तपालजी मुझे अचरज होता है कि आप मुझको दिक करते हैं और लज्जित करते हैं और अपनी मान हानि कराते हैं। झूठी सौगन्ध खाकर और प्रमाण देकर कहते हैं कि हमको जञ्जीर नहीं मिली और अब आप इनके सब के आगे पहिने फिर रहे हैं। अपराध मान हानि और दुःख के अतिरिक्त जो मुझे सहना पड़ा है, आपने इन बिचारे का जो किया जो हमारा आपका निर्णय हो जाता तो यह अब तक जहाज़ पर सवार हो जाते। यह जञ्जीर मैंने आपको दी है, क्या आप अस्वीकार करते हैं।

शि० अन्त०—जी हाँ, मुझे आपने दी है। मैंने कब कहा था कि नहीं दी।

व्यापारी—आप ही ने तो कहा और सौगन्ध भी खाई।

शि० अन्त०—किसने मुझ को अस्वीकार करते और सौगन्ध करते सुना है।

व्यापारी—आप अच्छी तरह जानते हैं कि मैंने सुना और किसने? आश्चर्य है कि आप फिर भले मानुसों में मुँह दिखाते हैं।

शि० अन्त०—तू पाजी है जो मुझ पर इस भाँति का दोष लगाता है हम बचा अपनी प्रतिष्ठा को तलवार की सहायता से सिद्ध कर देंगे (तलवार निकालता है)?

व्यापारी—हम खड़े हैं तू पाजी हमारा क्या कर सकता है। (आद्रा ललना रण्डी और लोग आते हैं)।

आद्रा—ठहरो ईश्वर के लिये न मारो वह पागल होगये हैं। अरे कोई जाके उनसे तलवार छीन लो और डमरू को भी बाँध लो और घर में ले जाओ।

शि० डम—भागो सरकार भागो ईश्वर के लिये किसी घर में भाग चलो। यह मन्दिर जान पड़ता है भाग चलो नहीं अब बच नहीं सकते (शि० अन्तपाल और शि० डमरू मन्दिर के भीतर भाग जाते हैं मन्दिर की जोगिन आती है)।

जोगिन—चुप रहो क्यों हल्ला करते हो यहाँ क्यों भीड़ लगाई है।

आद्रा—मैं अपने स्वामी को लेने आई हूँ, वह पागल हो गये हैं चलो भीतर चलें और उनको बाँध लें और घर ले जाकर उनके अच्छे होने का उपाय करें।

अनर्गल—मैं तो उसी समय जान गया था कि उनकी सुध बुध ठिकाने नहीं है।

व्यापारी—मुझे खेद है कि मैंने उन पर वृथा तलवार खींची ।

जोगिन—कैसे पागल हो गया है ?

आद्रा—इस सप्ताह में वह बहुत उदास जान पड़ते थे, बड़ी रुखाई से बोलते थे और जैसे पहिले थे उससे बहुत बदल गये थे आज तीसरे पहर तक ऐसा जोर नहीं था जैसा कि अब पागलपना जोर पर आ गया है ।

जोगिन—तो इनके उदासी का कारन क्या है क्या बहुत से धन में हाथ धोना पड़ा या कोई बड़ा मित्र मर गया या यह कि इन की आँखें अनुचित प्रेम में तो नहीं बहँक गई हैं । युवा मनुष्यों में बहुधा यही होता है, उनकी आखें इधर उधर बहका करती हैं । इनमें से कौन की बात है जिस से से उनको उन्माद हो गया है ।

आद्रा—इनमें से पिछला ही कारण जान पड़ता है, और तो कोई बात ऐसी नहीं हुई जिससे पागल हो गये यही जान पड़ता है कि किसी से मन लगा है जिससे बुद्धि फिर गई ।

जोगिन—तो तुमको चाहिये था कि इस बात के लिये लड़ी होतीं ।

आद्रा—मैंने जहाँ तक मुझ से हो सका कहा ।

जोगिन—पर कदाचित तुमने भली भाँति नहीं कहा ।

आद्रा—इतना कहा जहाँ तक मैं अपनी प्रतिष्ठा में धब्बा लगाये बिना कह सकती थी ।

जोगिन—फिर परदे में चुरा छिपा के कहा तो क्या ।

आद्रा—मैंने तो दिन रात इसी का तार बाँध दिया । रात को इसी से वह सोने नहीं पाते थे । जब अकेले बैठते थे तब मैं उनसे यही कहती थी और जब मित्रों के साथ बैठते थे तब भी मैं उनसे कहती जाती थी कि देखो यह

बड़ी बुरी बात है भले मानुष के। ऐसा काम नहीं करना चाहिये।

जोगिन—इसी से तुम कहती हो कि वह पागल हो गये हैं। लड़ाकी स्त्री की बक बक में पागल कुत्ते से भी अधिक विष होता है। अब मुझ को जान पड़ा कि तू इसी भाँति बक बक कर के रात के। सोने नहीं देती थी तिस पर तू कहती है कि मनुष्य पागल हो गया है। और तूने यह भी कहा कि हम सदा उनके खाने में लड़ाई की चटनी मिला देते थे। ऐसी बक बक में जो खाना खाया भी जाता है वह पचता नहीं। बिना पचे खाने का परिणाम ज्वर है। ज्वर भी एक पागल पन का दैारा है और तूने यह कहा कि उनकी खुशी और हँसी के समय में हम बक बक लगाते थे तो परिणाम उन्माद है खाने या सोने में जिससे मनुष्य का जीवन है जो मनुष्य छेड़ा जाय तो मनुष्य तो मनुष्य ही है पशु भी पागल हो जाता है। जान पड़ा कि तेरे लड़ाई ने तेरे पति के। पागल कर दिया।

ललना—तो क्या बहिन ने इस भाँति थोड़े ही कहा था। जब कहती थी तो नम्रता के साथ कहती थीं या लड़ाई लड़ती थी। तुम क्यों चुप खड़ी हो उत्तर क्यों नहीं देती।

आद्रा—इन्होंने उलटा दोष मुझ पर लगाया। लोगो भीतर घुस कर उनको पकड़ लाओ।

जोगिन—जी नहीं मेरे घर में चिड़िया तो पर मार ही नहीं सकती।

आद्रा—तो आप अपने ही नौकरों से कहिये कि उनको निकाल दें।

जोगिन—वह भी न होगा। उन्होंने मन्दिर देख कर सरन ली है और इसमें तुम्हारा अधिकार नहीं हो सकता जब तक कि मैं आप उनको ठीक न कर लूँगी। मैं उपाय करूँगी कि उनका उन्माद जाता रहे। न जायगा तब की तब है।

आद्रा—तो मैं उनकी सेवा करूँगी, उनके पास बैठूंगी, औषधि बनाऊँगी, यह मेरा काम है। अपना काम किसी और को न सौंपूँगी। इससे आप उनको मुझे सौंप दीजिये।

जोगिन—धीरज धरो, उनको अपने घर से जाने तो दूँगी, नहीं तब तक जो अच्छे उपाय मैं जानती हूँ सब न कर लूँगी; औषधि और आसीस जो मेरे बस में है सब करूँगी। मैंने जो सपथ की है और यह भेस धरा है इससे मुझको चाहिये कि उसी के अनुसार अच्छे काम करूँ। इससे तुम को चाहिये कि चल दो और उनको यहीं रहने दो।

आद्रा—मैं यहाँ से न टलूँगी। आप ऐसी अनहोनी बात करती है कि स्त्री को पति से अलग रक्खें।

जोगिन—बस चुप रहो और चल दो (बाहर जाती है)।

ललना—इस बे इज़्ज़ती के लिये महाराज से नालिश करो।

आद्रा—अच्छा चलो चलें मैं उनके पाँव पड़ूँगी और रो के और हाथ जोड़ के उनसे कहूँगी कि महाराज कृपा कर के चलें और तब यहाँ लाकर जोगिन से बरजोरी अपने स्वामी को ले लूँगी।

व्यापारी—इस समय पाँच बज गये होंगे और हम जानते हैं कि महाराज आप ही इस राह के मन्दिर के पिछवाड़ें उस जगह जाँयगे जहाँ पापियों को फाँसी होती है ।

अनर्गल—क्यों जाँयगे ।

व्यापारी—आज दुर्भाग्य वस एक बूढ़ा शिरीशनगर का व्यापारी यहाँ की बन्दरगाह में आया है और उस नगर के लोगों का यहाँ आना नगर के क़ानून के विरुद्ध है इसी से आज वह मारा जायगा ।

अनर्गल—अजी देखो वह आते हैं, हम लोग भी देखने चलें ।

ललना—जिस समय मन्दिर के पास से होकर जाँय राजा के पाँव पड़ जाओ ।

(मुसाहिबों के साथ राजा, नंगे सिर अजिन, जल्लाद और सिपाही आते हैं) ।

राजा—एक बार फिर नगर में ढंढोरा पीट दो कि जो कोई मनुष्य इसका जुर्माना दे देगा तो यह न मारा जायगा । इतनी दया हम इस पर करते हैं ।

आद्रा—दुहाई है, महाराज की दुहाई है जोगिन ने स्वामी को बन्द कर रक्खा है ।

राजा—जोगिन तो बड़ी धर्मात्मा है उसने तुमको कैसे दुख दिया ।

आद्रा—महाराज, अन्तपाल जिनसे महाराज की आज्ञानुसार मैंने व्याह किया और अपनी सारी सम्पत्ति का स्वामी बनाया और आज इस खोटे दिन में उनको उन्माद बड़े जोर का हुआ और वह पागलों की भाँति सड़क पर भागे ।

उनका नौकर उसी भाँति पागल हो गया और नगर के लोगों को राह में तङ्ग किया। किसी से अंगूठी छीन ली, किसी का गहना छीन लिया जो कुछ जी में आया सो किया। एक बार मैंने उनको बाँध करके घर में रक्खा और मैं हानिकर्मों का प्रबन्ध करने को जो उन्होंने जगह जगह किये थे बाहर गई। थोड़ी ही देर पीछे किसी उपाय से उन लोगों से जो उनको पकड़े हुये थे छुड़ा कर भागे और अपने पागल नौकर के साथ क्रोध में भरे हुये नङ्गी तलवार लिये मुझको फिर मिले और मेरा पीछा किया। हम लोग भागे और कई मनुष्यों को साथ लेकर उनको बाँधने आये तब वह इस मन्दिर में भाग गये और वहाँ तक मैंने इनका पीछा किया। यहाँ जोगिन ने किवाड़ बन्द कर लिये। अब हम लोगों को भीतर जाने से रोकती हैं और न उनको बाहर भेजती है। महाराज से दुहाई इसीलिये करती हूँ कि आज्ञा देकर उनको बाहर निकाल दीजिये।

राजा—बहुत दिनों से तुम्हारे स्वामी हमारे साथ लड़ाइयों में रहे। तब हम तुमसे वचन हारे हमारे कहने से तुमने उसके साथ व्याह किया, इतना ही हमारे बस में था। जाओ कोई जाओ और मन्दिर के किवाड़ खटखटाओ और जोगिन से कहो कि यहाँ आवे, हम पहिले इसका न्याय कर लेंगे तब आगे चलेंगे।

(एक नौकर आता है)

नौकर—वह भागो, वह भागो और किसी भाँति अपने बचने की चिन्ता करो, स्वामी और नौकर दोनों छूट गये और

दासियों को बहुत मारा और हमारे ओझाजी को बाँधा और उनकी दाढ़ी बत्ती से जला दी : जब दाढ़ी जलने लगी तो बहुत सा गन्दा पानी बुझाने के लिये उनके ऊपर डाल दिया। सरकार तो उनको सिखाते हैं कि धीरज धरो और नौकर कैंची लेकर उनको छेद रहा है। जो आप जल्दी और लोगों को न भेज देंगी तो दोनों आदमी बिचारे ओझा को मार ही डालेंगे।

आद्रा—अबे चुप रह, सरकार और नौकर तो यहाँ हैं, तू जो कहता है सब झूँठ है।

नौकर—सरकार अपनी सौगन्ध करके कहता हूँ, सच है जैसे मैंने देखा है साँस तो लिया नहीं। वह आपके लिये चिल्ला रहे हैं और कहते हैं कि मिल जायगी तो हम उसकी सूरत बिगाड़ देंगे। (परदे के पीछे हल्ला होता है) देखो, सुनो सुनो, वह आते हैं, भागो भागो।

राजा—आओ, हमारे निकट खड़ी हो जाओ, डरो मत, सिपाही सावधान हो जाओ।

आद्रा—हाय! यह स्वामी हैं देखो जान पड़ता है कि हम लोगों के बिना देखे निकल गये। अभी मैंने उनको मन्दिर के भीतर जाते देखा और अब कहाँ से आये।

(इप्सित नगर का अन्तपाल और इ० डमरू आते हैं)

इ० अन्त०—दुहाई है महाराज, दुहाई है महाराज, न्याय कर दीजिये महाराज की बहुत दिनों से सेवा कर रहा हूँ। महाराज की लड़ाइयों में बढ़ के हाथ मारा और महाराज की रक्षा की और महाराज के लिये अपने शरीर का लोहू बहाया, अब महाराज न्याय करें।

अजिन—जो मृत्यु के डर से मैं सिड़ी नहीं हो गया तो मैं अपने बेटे अन्तपाल और डमरू को देखता हूँ ।

इ० अन्त०—विचार कीजिये महाराज, इस स्त्री ने जिस के साथ महाराज की आज्ञा से मैंने व्याह किया, इसने बीच बाजार मेरी पति उतराई । आज जितना इसने किया उतना किसी के ध्यान में भी नहीं आसकता । दोष सब भाँति के होते हैं पर इससे बढ़ कर नहीं ।

राजा—साबित करो, देखो, हम न्याय करते हैं या नहीं ।

इ० अन्त०—महाराज आज इसने किवाड़े बन्द कर लिये और बदमाशों के साथ मेरे घर में खाना खाया और चैन किया ।

राजा—यह बड़ा दोष है क्यों स्त्री, तूने ऐसा काम किया ?

आद्रा—महाराज नहीं मैं और वह और मेरी बहिन तीनों ने एक साथ आज भोजन किया । महाराज यह जो दोष लगाते हैं सब झूठ हैं । महाराज मेरी आँखें फूट जाँय जो यह सच हो ।

ललना—महाराज जो कुछ यह कहती है सब सच न हो तो मेरे ऊपर आकाश फट पड़े ।

अनर्गल—तुम सब झूँठी सौगन्ध खाती हो, तुम से ईश्वर समझै । जो कुछ यह पागल मनुष्य कहता है, महाराज, सब सच है ।

इ० अन्त०—महाराज जो कुछ मैं कहता हूँ समझ के कहता हूँ । महाराज न कुछ शराब का नशा है न किसी भाँति का उन्माद है, इसमें सन्देह नहीं कि जो और कोई इसी

भाँति तंग किया जाता तो जरूर पागल हो जाता । आज इस स्त्री ने भोजन करने के समय मुझे घर में आने नहीं दिया और यह सुनार गवाह है और इसने जो इसके साथ मेल नहीं किया है तो यह गवाही देगा क्योंकि वह मेरे साथ था और फिर मेरे पास से एक ज़ञ्जीर लेने चला गया और कह गया कि मैं वाज़ार में लाऊँगा जहाँ मैंने और डमरू ने आज भोजन किया है। खाने के पीछे हम लोग ठहरे रहे पर सुनार नहीं आया तो मैं उसको ढूढ़ने निकला। राह में वह मुझे मिला उसके साथ वह मनुष्य भी था। वहाँ सुनार ने झूँठी सौगन्ध खाई कि हमने तुमको ज़ञ्जीर दी है परन्तु ईश्वर साक्षी है मैंने देखी भी नहीं और उसने लिये उसी से मुझ को सिपाही की सहायता से पकड़वाया। मैं ठहरा रहा एक और मेरा नौकर आया उसको मैंने रुपया लेने को अपने घर भेजा पर वह नहीं लौटा। तब मैंने सिपाही से कहा कि भाई चलो साथ ही साथ मैं आप ही अपने घर चलूँ। राह में मैंने देखा कि मेरी स्त्री और उसकी वहिन और वहुत से उसके साथी पाजी आ रहे हैं। उनके साथ एक ओझा मरभुक्खा दुष्ट जिसके शरीर में चार हड्डियाँ हैं एक वाजीगर जीते ही मरे से वढ़ कर था। यह पाजी झाड़ने फूकने लगा और मेरी आखों की ओर देख कर और मेरी नाड़ी देख कर कहने लगा कि तुम को भूत लगा है। इस पर सब मेरे ऊपर टूट पड़े और मुझ को बाँध कर एक अन्धेरे और ठढे घर के तहखाने में ले गये और वहाँ मुझ को और मेरे नौकर को बाँध कर छोड़ दिया। वहाँ मैंने अपने

दाँतों से रस्सी काट डाली और आप के पास दौड़ता हुआ आया हूँ । महाराज से हाथ जोड़ कर मेरी यही प्रार्थना है कि इस मेरी बेइज़्ज़ती करनेवालों को भली भाँति दण्ड दें ।

अनर्गल—महाराज, इतनी गवाही मैं दे सकता हूँ कि इन्होंने आज घर में खाना नहीं खाया और इनका द्वार बन्द था ।

राजा—पर इसको तूने ज़ञ्जीर दी है या नहीं ।

अनर्गल—हाँ, महाराज मैंने ज़ञ्जीर दी और जब यह मन्दिर के भीतर भागे थे तो इनके गले में वह ज़ञ्जीर पड़ी थी ।

व्यापारी—और हम सौगन्ध से कह सकते हैं कि तुमने स्वीकार किया कि हमको ज़ञ्जीर मिली है और पहिले तुम बाज़ार में सौगन्ध खा चुके थे कि हमने नहीं पाई । इसके ऊपर मैंने अपनी तलवार खींची और फिर तुम इस मन्दिर के भीतर भाग गये और हम नहीं जानते कि तुम किस जादू के ज़ोर से फिर निकल आये ।

इ० अन्त०—मैं कभी मन्दिर में नहीं गया और न तुमने कभी मेरे ऊपर तलवार खींची और न मैंने ज़ञ्जीर देखी । हे ईश्वर ! मेरे सहाय हो, यह सब मुझको झूँठा दोष लगा रहे हैं ।

राजा—बड़ा पेंचदार मुक़द्दमा है । जान पड़ता है कि तुम लोग सब भाँग खा गये हो । जो इस घर के भीतर गया था तो इसमें होता जो पागल होता तो ऐसी साफ़ साफ़ बातें क्यों कहता, तुम कहती हो कि इसने घर में खाना

खाया और सुनार इनकार करता है। क्यों बे तू क्या कहता है ?

इ० डम०—महाराज, आज तो इन्होंने इस स्त्री के साथ सराय में खाना खाया है ।

रण्डी- हाँ महाराज और इन्होंने मेरे हाथ से अँगूठी निकाल ली।

इ० अन्त०—जी यह अँगूठी मुझको इसीसे मिली है ।

राजा—और तूने इसको मन्दिर में जाते देखा था ।

रण्डी--महाराज ऐसे देखा, जैसे महाराज को देख रही हूँ ।

राजा—बड़ा विचित्र मामला है, जोगिन को बुलाओ, तुम लोग सब पागल हो गये हो ।

(एक मनुष्य बाहर जाता है)

अजिन—महाराज जो आज्ञा हो तो मैं एक विनती करूँ, मैं एक मित्र देखता हूँ । जो कदाचित् मेरी जान बचावे और जितना रुपया मुझे देना चाहिये दे दे ।

राजा—कह जो कुछ तुझे कहना हो कह ।

अजिन—क्यों महाशय तुम्हारा नाम अन्तपाल है और यह तुम्हारा दास डमरू है।

शि० डम०—अभी थोड़ी बेर हुई कि मैं इनका बँधा दास था। पर महाशय इन्होंने कृपा करके मेरे बन्धन काट दिये और अब मैं डमरू इनका नौकर हो गया ।

अजिन—मुझे विश्वास है कि तुम दोनों मुझे जानते हो ।

इ० डम०—आपको देख कर हमको अपनी दशा की सुध आगई। क्योंकि हम भी जैसे आप बँधे हैं, वैसे ही बँधे थे। आप तो ओझा जी की औषधि नहीं करते ।

अजिन—हाय, दुःख ने क्या मेरी सूरत ऐसी बदल दी, तुम दोनों मेरी बोली तो पहिचानते होगे।

इ० अन्त०—वह भी नहीं ?

अजिन—और न डमरू जानता है ?

इ० डम०—जी नहीं ?

अजिन—हमको तो विश्वास है कि तू पहिचानता है ?

इ० डम०—जी मुझको तो विश्वास है कि मैं नहीं पहिचानता और जो कुछ मनुष्य कहे, उसे आपको जरूर विश्वास कर लेना चाहिये।

अजिन—हाय, मेरी बोली भूल गये। हात् तेरे समय की, सात ही वर्ष में मेरी बोली ऐसी बिगाड़ दी कि मेरा एक ही लड़का बचा था, सो भी मेरी बोली नहीं पहिचानता ? बुढ़ापे के कारण मेरी सूरत ही बदल गई है तो भी मेरे मस्तक में अभी तक कुछ न कुछ स्मरणशक्ति है। मेरे बुझते हुये दीपक में, अभी जगमगाहट बची है, मेरे बहरे कानों में सुनने की शक्ति है। इन सब की गवाही पक्की इस बात की होती है कि तू मेरा बेटा अन्तपाल है।

इ० अन्त०—मैंने तो अपने बाप को जीवन भर देखा नहीं ?

अजिन—बेटा, अभी सात बरस हुये कि हम तुम शिरीशनगर में अलग हुये, पर कदाचित् तुमको इस समय जब कि मैं दुःख में हूँ, इससे मुझको अपना बाप कहने में लाज आती है।

इ० अन्त०—महाराज, और जितने आदमी मुझको इस नगर में जानते हैं, गवाह हैं कि मैंने शिरीशनगर को कभी देखा ही नहीं।

राजा—शिरीशनगर के व्यापारी! आज बीस वर्ष से हम इप्लित नगर के अन्तपाल का प्रतिपालन कर रहे हैं और इतने दिनों में इसने शिरीशनगर को देखा ही नहीं। जान पड़ता है कि तेरी आयु और डर ने तुझको बुद्धिहीन कर दिया है।

(शिरीशनगर के अन्तपाल और शि० डमरू के साथ जोगिन आती है)

जोगिन—महाराज एक आदमी को देखिये, इसकी कितनी बे-ईज़्ज़ती हुई है।

आद्रा—मैं दो स्वामी देखती हूँ या मेरी आँखों का दोष है।

राजा—इनमें से एक दूसरे का भूत है, मनुष्य कौन और भूत कौन है कोई पहिचान सकता है।

शि० डम०—महाराज मैं डमरू हूँ, इससे कह दीजिये जाय।

इ० डम०—नहीं महाराज, मैं डमरू हूँ मुझे रहने दीजिये।

शि० अन्त०—अजिन हो या उनकी आत्मा हो।

शि० डम०—हाय, बड़े सरकार तुमको यहाँ किसने बाँधा।

जोगिन—चाहे जिसने बाँधा हो, मैं उनको छुड़ा लूँगी और फिर अपने स्वामी को पाऊँगी। क्यों अजिन, बोलो तुम्हीं हो न जिनका व्याह अमलिका के साथ हुआ था और उससे एक ही बार में दो लड़के पैदा हुये थे। जो तुम वही अजिन हो तो इसी अमलिका से बोलो।

अजिन—जो मैं स्वप्न नहीं देख रहा हूँ तो तू अमलिका है। जो तू वही है तो बता कि वह दोनों लड़के क्या हुये, जो उसी मस्तूल में बँधे हुये बह गये थे।

जोगिन—वह और मैं और डमरू तीनों को वहाँ के लोगों ने पकड़ लिया और थोड़ी वेर पीछे मेरे लड़के और डमरू को कराँची के मछुओं ने मुझसे छीन लिया और मुझे वहाँ वालों के साथ छोड़ दिया। मैं यह नहीं कह सकती उन दोनों का क्या हुआ और मैं अब इस दशा में हूँ जो तुम देख रहे हो।

राजा—जो कहानी आज सवेरे तूने हमसे कही थी, व‿ो तो सच हुई। यह क्या दोनों अन्तपाल हैं, जो एक ही सूरत के हैं और यही दोनों डमरू हैं, जो विलकुल एक से हैं और फिर वह कहती है कि समुद्र में जहाज़ टूट गया था। इससे ठीक तो जान पड़ता है कि इन दोनों लड़कों के यही माँ वाप हैं और संयोग से यहाँ सव आ कर मिल गये। अन्तपाल तुम इप्सितनगर से आये।

शि० अन्त०—नहीं, मैं शिरीशनगर से आता हूँ।

राजा—अलग अलग खड़े हो, हम पहिचान नहीं सकते।

इ० अन्त०—महाराज, मैं इप्सितनगर से आता हूँ।

इ० डम०—और मैं भी इनके साथ था।

इ० अन्त०—और महाराज के चाचा, राजा साहव वहादुर सेनापति मुझको इस नगर में लाये थे।

आद्रा—तो तुममें से आज किस ने मेरे साथ खाना खाया था।

शि० अन्त०—मैंने वहू जी।

आद्रा—तो तुम मेरे पति नहीं हो।

इ० अन्त०—नहीं, हम ऐसे स्वामी नहीं होते।

श० अन्त०—तो मैं भी तो नहीं हूँ ? पर इसने मुझको स्वामी कहा था और इस स्त्री ने जो इसकी वहिन है, मुझको

सुन्दर हूँ। चलो, चलो, इनकी बातें सुनने चलो, आगे बढ़ो।

शि० डम०—नहीं तुम आगे चलो।

इ० डम०—इसका हम तुम फ़ैसला कैसे करेंगे।

शि० डम०—बड़े छोटे के कपड़े में भेद कर देंगे।

इ० डम०—नहीं भाई, ऐसे चलो। हम लोग संसार में साथ स रहें और अब आगे पीछे नहीं, साथ साथ चलो।

(सब बाहर जाते हैं)